



વિપશ્યના વિશોધન વિન્યાસ

# धम्मपद

(हिंदी अनुवाद सहित)



अनुवाद स. ना. टंडन

विपश्यना विशोधन विन्यास

धम्मगिरि, इगतपुरी

© विपश्यना विशोधन विन्यास  
सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण : २००१  
संस्करण : २००७, २०१०, २०१२

मूल्य: रु. ४५/-

ISBN 978-81-7414-217-7

प्रकाशक:

विपश्यना विशोधन विन्यास,

धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२ ४०३

जिला- नाशिक, महाराष्ट्र

फोन: ०२५५३-२४४०७६, २४४०८६, २४३७१२, २४३२३८

फैक्स: ९१-२५५३-२४४१७६

Email: vri\_admin@dhamma.net.in

info@giri.dhamma.org

Website: www.vridhamma.org

मुद्रक:

अपोलो प्रिंटिंग प्रेस

जी-२५९, सीकॉफ लिमिटेड, ६९ एम. आय. डी. सी.,

सातपुर, नाशिक-४२२००७, महाराष्ट्र

# विषय-सूची

प्राक्कथन . . . . .	V
१. यमकवग्गो . . . . .	१
२. अप्पमादवग्गो . . . . .	५
३. चित्तवग्गो . . . . .	८
४. पुप्फवग्गो . . . . .	१०
५. बालवग्गो . . . . .	१३
६. पण्डितवग्गो . . . . .	१६
७. अरहन्तवग्गो . . . . .	१९
८. सहस्सवग्गो . . . . .	२१
९. पापवग्गो . . . . .	२४
१०. दण्डवग्गो . . . . .	२७
११. जरावग्गो . . . . .	३०
१२. अत्तवग्गो . . . . .	३२
१३. लोकवग्गो . . . . .	३४
१४. बुद्धवग्गो . . . . .	३६
१५. सुखवग्गो . . . . .	३९
१६. पियवग्गो . . . . .	४२
१७. कोधवग्गो . . . . .	४५
१८. मलवग्गो . . . . .	४८

१९. धम्मट्टवग्गो . . . . .	५२
२०. मग्गवग्गो . . . . .	५५
२१. पकिण्णकवग्गो . . . . .	५९
२२. निरयवग्गो . . . . .	६२
२३. नागवग्गो . . . . .	६५
२४. तण्हावग्गो . . . . .	६८
२५. भिक्खुवग्गो . . . . .	७३
२६. ब्राह्मणवग्गो . . . . .	७८
धम्मपदे वग्गानमुद्धानं . . . . .	८७
गाथानमुद्धानं . . . . .	८८
परिशिष्ट-१ . . . . .	८९
विपश्यना साहित्य . . . . .	९४
विपश्यना साधना केंद्र . . . . .	९७



## प्राक्कथन

भगवान बुद्ध की अमर वाणी 'धम्मपद' का भाषानुवाद आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। विश्वभर के लोकप्रिय ग्रंथों में इसका बहुत ऊंचा स्थान है। विपश्यना के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ इसकी लोकप्रियता और भी बढ़ती चली जायगी, इसमें लेशमात्र भी संदेह नहीं है।

कल्याणमित्र विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्काजी दस-दिवसीय विपश्यना शिविरों में साधना पक्ष को समझाने के लिए इसमें से बहुत से उद्धरण देते हैं। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि आपके लिए इस ग्रंथ का कितना महत्त्व है। ध्यान से देखा जाय तो इसकी एक-एक गाथा साधना पक्ष को मजबूत करने वाली और अगाध प्रेरणा जगाने वाली है।

'धम्मपद' में समूची बुद्धवाणी की कुंजी भी उपलब्ध है -

“यथापि रुचिरं पुष्पं, वण्णवन्तं अगन्धकं।  
एवं सुभासिता वाचा, अफला होति अकुब्बतो॥

(गाथा ५१)

“यथापि रुचिरं पुष्पं, वण्णवन्तं सुगन्धकं।  
एवं सुभासिता वाचा, सफला होति कुब्बतो॥”

(गाथा ५२)

“जैसे कोई पुष्प सुंदर और वर्णयुक्त होने पर भी गंधरहित हो, वैसे ही अच्छी कही हुई (बुद्ध-)वाणी होती है फलरहित, यदि कोई तदनुसार (आचरण) न करे।

“जैसे कोई पुष्प सुंदर और वर्णयुक्त हो और सुगंध वाला हो, वैसे ही अच्छी कही हुई (बुद्ध-)वाणी होती है फलसहित, यदि कोई तदनुसार (आचरण) करने वाला हो।”

इस प्रकार बुद्धवाणी फलप्रद तभी होती है जब कोई इसके अनुसार आचरण करे, इसे अनुभूति पर उतारे। यही बुद्धवाणी की कुंजी है।

उदाहरण -

“सब्बे सङ्घारा अनिच्चाति, यदा पञ्जाय पस्सति।  
अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया॥”

(गाथा २७७)

“सारे संस्कार अनित्य हैं” (याने जो कुछ उत्पन्न होता है वह नष्ट होता ही है)। इस (सच्चाई) को जब कोई (विपश्यना-)प्रज्ञा से देख (-जान) लेता है, तब उसको दुःखों का निर्वेद प्राप्त होता है (अर्थात्, दुःख-क्षेत्र के प्रति भोक्ताभाव टूट जाता है) – ऐसा है यह विशुद्धि (विमुक्ति) का मार्ग!”

यदि कोई इस गाथा का दस, बीस, पचास या सौ बार पाठ ही करता रहे, तो इससे कोई लाभ नहीं होता; केवल बुद्धि का यत्किंचित परिष्कार होता है। जब इसी को अनुभूति पर उतार लेते हैं, तब अपरिमित कल्याण होने लगता है, सारे दुःखों से मुक्त होने का रास्ता मिल जाता है।

‘धम्मपद’ में ऐसी गाथाओं की भरमार है। इसीलिए विपश्यना विशोधन विन्यास ने बुद्धवाणी में से सर्वप्रथम इसी ग्रंथ का भाषानुवाद करने का निर्णय लिया। अब शनैः शनैः अन्यान्य ग्रंथों के भाषानुवाद का कार्य भी हाथ में लिया जायगा।

इस ग्रंथ में किये गये अनुवाद को आपके लिए अधिकाधिक उपयोगी बनाने का प्रयास किया गया है। अनुवाद सरल भाषा में है जिसे हर कोई समझ सके। साधना पक्ष को उजागर करने की भी पूरी चेष्टा की गयी है। गाथाओं के तात्पर्य को समझाने के लिए प्रचुर सामग्री कोष्ठकों में डाली गयी है। ‘परिशिष्ट’ के रूप में “धम्मपद” की गाथाओं से मेल खाते कल्याणमित्र द्वारा विरचित हिंदी **राजस्थानी दोहों** को भी ग्रंथ में सम्मिलित किया गया है जो न केवल प्रेरणादायक सामग्री का काम करते हैं बल्कि अपने अनूठेपन के कारण ग्रंथ की शोभा को भी चार चांद लगाते हैं।

ध्यान रहे कि समूची बुद्धवाणी को ‘तिपिटक’ के नाम से जाना जाता है। ‘तिपिटक’ के तीन बड़े विभाजन हैं – (१) विनयपिटक, (२) सुत्तपिटक तथा (३) अभिधम्मपिटक। इनमें से ‘सुत्तपिटक’ के अंतर्गत पांच निकाय हैं – दीघनिकाय, मज्झिमनिकाय, संयुत्तनिकाय, अङ्गुत्तरनिकाय तथा खुद्दकनिकाय। ‘खुद्दकनिकाय’ के अंतर्गत १९ ग्रंथ हैं। इन १९ ग्रंथों में से एक है – ‘धम्मपद’।

इस ग्रंथ का पालि-पाठ म्यांमा देश में सन १९५४-५६ में संपन्न हुए छठ संगायन में स्वीकृत पाठ का अनुगामी है। इसी कारण यह सर्वथा प्रामाणिक है।

आशा है इस अनमोल ग्रन्थ का प्रकाशन विपश्यी साधकों, साधिकाओं, धर्म में अभिरूचि रखने वाले जिज्ञासुओं के लिए लाभप्रद होगा।

**विपश्यना विशोधन विन्यास**

धम्मगिरि, इगतपुरी

# धम्मपद

## १. यमकवग्गो

१. मनोपुब्बङ्गमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया।  
मनसा चे पदुट्ठेन, भासति वा करोति वा।  
ततो नं दुक्खमन्वेति, चक्कं वहतो पदं॥

मन सभी धर्मों (प्रवृत्तियों) का अगुआ है, मन ही प्रधान है, सभी धर्म मनोमय हैं। जब कोई व्यक्ति अपने मन को मैला करके कोई वाणी बोलता है, अथवा शरीर से कोई कर्म करता है, तब दुःख उसके पीछे ऐसे हो लेता है, जैसे गाड़ी के चक्के बैल के पैरों के पीछे-पीछे हो लेते हैं।

२. मनोपुब्बङ्गमा धम्मा, मनोसेट्ठा मनोमया।  
मनसा चे पसन्नेन, भासति वा करोति वा।  
ततो नं सुखमन्वेति, छायाव अनपायिनी॥

मन सभी धर्मों (प्रवृत्तियों) का अगुआ है, मन ही प्रधान है, सभी धर्म मनोमय हैं। जब कोई व्यक्ति अपने मन को उजला रख कर कोई वाणी बोलता है, अथवा शरीर से कोई कर्म करता है, तब सुख उसके पीछे ऐसे हो लेता है जैसे कभी संग न छोड़ने वाली छाया संग-संग चलने लगती है।

३. अक्कोच्छि मं अवधि मं, अजिनि मं अहासि मे।  
ये च तं उपनय्हन्ति, वेरं तेसं न सम्मति॥

‘मुझे कोसा’, ‘मुझे मारा’, ‘मुझे हराया’, ‘मुझे लूटा’ - जो मन में ऐसी गांठें बांधते रहते हैं, उनका वैर शांत नहीं होता।

४. अक्कोच्छि मं अवधि मं, अजिनि मं अहासि मे।  
ये च तं नुपनय्हन्ति, वेरं तेसूपसम्मति॥

‘मुझे कोसा’, ‘मुझे मारा’, ‘मुझे हराया’, ‘मुझे लूटा’ - जो मन में ऐसी गांठें नहीं बांधते हैं, उनका वैर शांत हो जाता है।



५. न हि वेरेन वेरानि, सम्मन्तीध कुदाचनं।  
अवेरेन च सम्मन्ति, एस धम्मो सनन्तनो ॥

यहां (इस लोक में) कभी भी वैर से वैर शांत नहीं होते, बल्कि अवैर से शांत होते हैं। यही सनातन धर्म है।

६. परे च न विजानन्ति, मयमेत्थ यमामसे।  
ये च तत्थ विजानन्ति, ततो सम्मन्ति मेधगा ॥

अनाड़ी लोग नहीं जानते कि हम यहां (इस संसार) से जाने वाले हैं। जो इसे जान लेते हैं उनके झगड़े शांत हो जाते हैं।

७. सुभानुपस्सिं विहरन्तं, इन्द्रियेसु असंवुतं।  
भोजनम्हि चामत्तञ्जुं, कुसीतं हीनवीरियं।  
तं वे पसहति मारो, वातो रुक्खंव दुब्बलं ॥

अच्छी लगने वाली चीजों को शुभ ही शुभ देखते विहार करने वाले, इंद्रियों में असंयत, भोजन की मात्रा के अजानकार, आलसी और उद्योगहीन को मार ऐसे सताता है जैसे दुर्बल वृक्ष को मारुत (पवन)।

८. असुभानुपस्सिं विहरन्तं, इन्द्रियेसु सुसंवुतं।  
भोजनम्हि च मत्तञ्जुं, सद्धं आरद्धवीरियं।  
तं वे नप्पसहति मारो, वातो सेलंव पब्बतं ॥

अशुभ को अशुभ जान कर साधना करने वाले, इंद्रियों में सुसंयत, भोजन की मात्रा के जानकार, श्रद्धावान और उद्योगरत को मार उसी प्रकार नहीं डिगा सकता जैसे कि वायु शैल पर्वत को।

९. अनिक्कसावो कासावं, यो वत्थं परिदहिस्सति।  
अपेतो दमसच्चेन, न सो कासावमरहति ॥

जिसने कषायों (चित्तमलों) का परित्याग नहीं किया है पर कषाय वस्त्र धारण किये हुए है, वह संयम और सत्य से परे है। वह कषाय वस्त्र (धारण करने) का अधिकारी नहीं है।

१०. यो च वन्तकसावस्स, सीलेसु सुसमाहितो।  
उपेतो दमसच्चेन, स वे कासावमरहति ॥

जिसने कषायों (चित्तमलों) को निकाल बाहर किया है, शीलियों में प्रतिष्ठित है,

संयम और सत्य से युक्त है, वह निःसंदेह काषाय वस्त्र (धारण करने) का अधिकारी है।

११. असारे सारमतिनो, सारे चासारदस्सिनो।  
ते सारं नाधिगच्छन्ति, मिच्छासङ्कप्पगोचरा॥

जो निःसार को सार और सार को निःसार समझते हैं, ऐसे गलत चिंतन में लगे हुए व्यक्तियों को सार प्राप्त नहीं होता।

१२. सारञ्च सारतो जत्वा, असारञ्च असारतो।  
ते सारं अधिगच्छन्ति, सम्मासङ्कप्पगोचरा॥

सार को सार और निःसार को निःसार जान कर शुद्ध चिंतन वाले व्यक्ति सार को प्राप्त कर लेते हैं।

१३. यथा अगारं दुच्छन्नं, वुट्ठी समतिविज्जति।  
एवं अभावितं चित्तं, रागो समतिविज्जति॥

जैसे बुरी तरह छाये हुए घर में वर्षा का पानी घुस जाता है, वैसे ही अभावित चित्त में राग घुस जाता है।

१४. यथा अगारं सुच्छन्नं, वुट्ठी न समतिविज्जति।  
एवं सुभावितं चित्तं, रागो न समतिविज्जति॥

जैसे अच्छी तरह छाये हुए घर में वर्षा का पानी नहीं घुस पाता है, वैसे ही (शमथ और विपश्यना से) अच्छी तरह भावित चित्त में राग नहीं घुस पाता है।

१५. इध सोचति पेच्च सोचति, पापकारी उभयत्थ सोचति।  
सो सोचति सो विहज्जति, दिस्वा कम्मकिलिट्ठमत्तनो॥

यहां (इस लोक में) शोक करता है, मरणोपरांत (परलोक में) शोक करता है, पाप करने वाला (व्यक्ति) दोनों जगह शोक करता है। वह अपने कर्मों की मलिनता देख कर शोकापन्न होता है, संतापित होता है।

१६. इध मोदति पेच्च मोदति, क्तपुज्जो उभयत्थ मोदति।  
सो मोदति सो पमोदति, दिस्वा कम्मविसुद्धिमत्तनो॥

यहां (इस लोक में) प्रसन्न होता है, मरणोपरांत (परलोक में) प्रसन्न होता है, पुण्य किया हुआ व्यक्ति दोनों जगह प्रसन्न होता है। वह अपने कर्मों की शुद्धता (पुण्यकर्मसंपत्ति) देख कर मुदित होता है, प्रमुदित होता है।

१७. इध तप्पति पेच्च तप्पति, पापकारी उभयत्थ तप्पति ।  
“पापं मे कत”न्ति तप्पति, भिय्यो तप्पति दुग्गतिं गतो ॥

यहां (इस लोक में) संतप्त होता है, प्राण छोड़ कर (परलोक में) संतप्त होता है। पापकारी दोनों जगह संतप्त होता है। ‘मैंने पाप किया है’ - इस (चिंतन) से संतप्त होता है (और) दुर्गति को प्राप्त होकर और भी (अधिक) संतप्त होता है।

१८. इध नन्दति पेच्च नन्दति, कतपुञ्जो उभयत्थ नन्दति ।  
“पुञ्जं मे कत”न्ति नन्दति, भिय्यो नन्दति सुग्गतिं गतो ॥

यहां (इस लोक में) आनंदित होता है, प्राण छोड़ कर (परलोक में) आनंदित होता है। पुण्यकारी दोनों जगह आनंदित होता है। ‘मैंने पुण्य किया है’ - इस (चिंतन) से आनंदित होता है (और) सुगति को प्राप्त होने पर और भी (अधिक) आनंदित होता है।

१९. बहुम्मि चे संहितं भासमानो, न तक्करो होत्ति नरो पमत्तो ।  
गोपोव गावो गणयं परेसं, न भागवा सामञ्जस्स होत्ति ॥

धर्मग्रंथों (तिपिटक) का कितना ही पाठ करे, लेकिन यदि प्रमाद के कारण मनुष्य उन धर्मग्रंथों के अनुसार आचरण नहीं करता, तो दूसरों की गौवें गिनने वाले ग्वालों की तरह वह श्रमणत्व का भागी नहीं होता।

२०. अप्पम्मि चे संहितं भासमानो, धम्मस्स होत्ति अनुधम्मचारी ।  
रागञ्च दोसञ्च पहाय मोहं,सम्मप्पजानो सुविमुत्तचित्तो ।  
अनुपादियानो इध वा हरं वा, स भागवा सामञ्जस्स होत्ति ॥

धर्मग्रंथों का भले थोड़ा ही पाठ करे, लेकिन यदि वह (व्यक्ति) धर्म के अनुकूल आचरण करने वाला होता है, तो राग, द्वेष और मोह को त्याग कर, संप्रज्ञानी बन, भली प्रकार विमुक्त चित्त वाला होकर, इहलोक अथवा परलोक में कुछ भी आसक्ति न करता हुआ श्रमणत्व का भागी हो जाता है।

यमकवग्गो पठमो निड्डितो ।

## २. अप्पमादवग्गो

२१. अप्पमादो अमतपदं, पमादो मच्चुनो पदं।  
अप्पमत्ता न मीयन्ति, ये पमत्ता यथा मत्ता ॥

प्रमाद न करना अमृत (निर्वाण) का पद है और प्रमाद मृत्यु का पद। प्रमाद न करने वाले (कभी) मरते नहीं और प्रमादी (तो) मरे-समान होते हैं।

२२. एवं विसेसतो जत्वा, अप्पमादमिह पण्डिता।  
अप्पमादे पमोदन्ति, अरियानं गोचरे रता ॥

ज्ञानी जन अप्रमाद के बारे में इस प्रकार विशेष रूप से जान कर आर्यों की गोचरभूमि में रमण करते हुए अप्रमाद में प्रमुदित होते हैं।

२३. ते ज्ञायिनो साततिका, निच्चं दब्धपरक्कमा।  
फुसन्ति धीरा निब्बानं, योगक्खेमं अनुत्तरं ॥

वे सतत ध्यान करने वाले, नित्य दृढ़ पराक्रम करने वाले, धीर पुरुष उत्कृष्ट योगक्षेम वाले निर्वाण को प्राप्त (अर्थात्, इसका साक्षात्कार) कर लेते हैं।

२४. उट्टानवतो सतीमतो, सुचिकम्मस्स निसम्मकारिनो।  
सञ्जतस्स धम्मजीविनो, अप्पमत्तस्स यसोभिवड्ढति ॥

उद्योगशील, स्मृतिमान, शुचि (दोषरहित) कर्म करने वाले, सोच-समझ कर काम करने वाले, संयमी, धर्म का जीवन जीने वाले, अप्रमत्त (व्यक्ति) का यश खूब बढ़ता है।

२५. उट्टानेनप्पमादेन, संयमेन दमेन च।  
दीपं कयिराथ मेधावी, यं ओघो नाभिकीरति ॥

मेधावी (पुरुष) उद्योग, अप्रमाद, संयम तथा (इंद्रियों के) दमन द्वारा (अपने लिए ऐसा) द्वीप बना ले जिसे (चार प्रकार के क्लेशों की) बाढ़ आप्लावित न कर सके।

२६. पमादमनुयुज्जन्ति, बाला दुम्मेधिनो जना।  
अप्पमादञ्च मेधावी, धनं सेट्ठं व रक्खति ॥

मूर्ख, दुर्बुद्धि जन प्रमाद में लगे रहते हैं, (जबकि) मेधावी श्रेष्ठ धन के समान अप्रमाद की रक्षा करता है।

२७. मा पमादमनुयुज्जेथ, मा कामरतिसन्धवं।  
अप्पमत्तो हि ज्ञायन्तो, पप्पोति विपुलं सुखं ॥

प्रमाद मत करो और न ही कामभोगों में लिप्त होओ, क्योंकि अप्रमादी ध्यान करते हुए महान (निर्वाण) सुख को पा लेता है।

२८. पमादं अप्पमादेन, यदा नुदति पण्डितो।  
पज्जापासादमारुह, असोको सोकिनिं पजं।  
पब्बतट्ठोव भूमट्ठे, धीरो बाले अवेक्खति ॥

जब कोई समझदार व्यक्ति प्रमाद को अप्रमाद से परे धकेल देता (अर्थात्, जीत लेता) है, तब वह प्रज्ञारूपी प्रासाद पर चढ़ा हुआ शोकरहित हो जाता है। (ऐसा) शोकरहित धीर (मनुष्य) शोकग्रस्त (विमूढ़) जनों को ऐसे ही (करुण भाव से) देखता है जैसे कि पर्वत पर खड़ा हुआ (कोई व्यक्ति) धरती पर खड़े हुए लोगों को देखे।

२९. अप्पमत्तो पमत्तेसु, सुत्तेसु बहुजागरो।  
अबलस्संव सीघस्सो, हित्वा याति सुमेधसो ॥

प्रमाद करने वालों में अप्रमादी (क्षीणाश्रव) तथा (अज्ञान की नींद में) सोये लोगों में (प्रज्ञा में) अतिसचेत उत्तम प्रज्ञा वाला (दूसरों को) पीछे छोड़ कर (ऐसे आगे निकल जाता है) जैसे शीघ्रगामी अश्व दुर्बल अश्व को।

३०. अप्पमादेन मघवा, देवानं सेट्ठतं गतो।  
अप्पमादं पसंसन्ति, पमादो गरहितो सदा।

अप्रमाद के कारण इंद्र देवताओं में श्रेष्ठता को प्राप्त हुआ। (पंडित जन) अप्रमाद की प्रशंसा करते हैं, और प्रमाद की सदा निंदा होती है।

३१. अप्पमादरतो भिक्खु, पमादे भयदस्सि वा।  
संयोजनं अणुं थूलं, इहं अग्गीव गच्छति ॥

जो साधक अप्रमाद में रत रहता है, या प्रमाद में भय देखता है, वह अपने छोटे-बड़े सभी (कर्म-संस्कारों के) बंधनों को आग की भांति जलाते हुए चलता है।

३२. अप्पमादरतो भिक्खु, पमादे भयदस्सि वा।  
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके।

जो साधक अप्रमाद में रत रहता है, या प्रमाद में भय देखता है, उसका पतन नहीं हो सकता। वह (तो) निर्वाण के समीप (पहुँचा हुआ) होता है।

अप्पमादवग्गो दुत्तियो निट्ठितो।

### ३. चित्तवग्गो

३३. फन्दनं चपलं चित्तं, दूरक्खं दुब्भिवारयं।  
उजुं करोति मेधावी, उसुकारोव तेजनं ॥

चंचल, चपल, कठिनाई से संरक्षण और कठिनाई से (ही) निवारण योग्य चित्त को मेधावी (पुरुष) वैसे ही सीधा करता है जैसे बाण बनाने वाला बाण को।

३४. वारिजोव थले खित्तो, ओकमोकतउब्भतो।  
परिफन्दतिदं चित्तं, मारधेय्यं पहातवे ॥

जैसे जल से निकाल कर धरती पर फेंकी गयी मछली तड़फड़ाती है, वैसे ही मार के फंदे से निकलने के लिए यह चित्त (तड़फड़ाता है)।

३५. दुब्भिग्गहस्स लहुनो, यत्थकामनिपातिनो।  
चित्तस्स दमथो साधु, चित्तं दन्तं सुखावहं ॥

ऐसे चित्त का दमन करना अच्छा है जिसको वश में करना कठिन है, जो शीघ्रगामी है और जहां चाहे वहां चला जाता है। दमन किया गया चित्त सुख देने वाला होता है।

३६. सुदुद्दसं सुनिपुणं, यत्थकामनिपातिनं।  
चित्तं रक्खेथ मेधावी, चित्तं गुत्तं सुखावहं ॥

जो बड़ा दुर्दर्श है, कठिनाई से दिखाई पड़ने वाला है, बड़ा चालाक है, जहां चाहे वहीं जा पहुँचता है, समझदार (व्यक्ति) को चाहिए कि (ऐसे) चित्त की रक्षा करे। सुरक्षित चित्त बड़ा सुखदायी होता है।

३७. दूरङ्गमं एकचरं, असरीरं गुहासयं।  
ये चित्तं संयमेस्सन्ति, मोक्खन्ति मारबन्धना ॥

जो (कोई) (पुरुष, स्त्री, गृहस्थ अथवा प्रव्रजित) दूरगामी, अकेला विचरने वाले, शरीर-रहित, गुहाशायी चित्त को संयमित करेंगे, वे मार के बंधन से मुक्त हो जायेंगे।

३८. अनवट्टितचित्तस्स, सद्धम्मं अविजानतो।  
परिप्लवपसादस्स, पज्जा न परिपूरति ॥

जिसका चित्त अस्थिर है, जो सद्धर्म को नहीं जानता, जिसकी श्रद्धा दोलायमान (डांवाडोल) है, उसकी प्रज्ञा परिपूर्ण नहीं हो सकती।

३९. अनवस्सुत चित्तस्स, अनन्वाहत चेतसो।  
पुञ्जपापपहीनस्स, नत्थि जागरतो भयं॥

जिसके चित्त में राग नहीं, जिसका चित्त द्वेष से रहित है, जो पाप-पुण्य-विहीन है, उस सजग रहने वाले (क्षीणाश्रव) को कोई भय नहीं होता।

४०. कुम्भूपमं कायमिमं विदित्वा, नगरूपमं चित्तमिदं टपेत्वा।  
योधेथ मारं पञ्जावुधेन, जितञ्च रक्खे अनिवेसनो सिया॥

इस शरीर को घड़े के समान (भंगुर) जान, और इस चित्त को गढ़ के समान (रक्षित और दृढ़) बना, प्रज्ञारूपी शस्त्र के साथ मार से युद्ध करे। (उसे) जीत लेने पर भी (चित्त की) रक्षा करे और अनासक्त बना रहे।

४१. अचिरं वतयं कायो, पथविं अधिसेस्सति।  
छुद्धो अपेतविञ्जाणो, निरत्थं कलिङ्गरं॥

अहो! यह तुच्छ शरीर शीघ्र ही चेतनारहित होकर निरर्थक काठ के टुकड़े की भांति पृथ्वी पर पड़ रहेगा।

४२. दिसो दिसं यं तं कयिरा, वेरी वा पन वेरिनं।  
मिच्छापणिहितं चित्तं, पापियो नं ततो करे॥

शत्रु शत्रु की अथवा वैरी वैरी की जितनी हानि करता है, कुमार्ग पर लगा हुआ चित्त उससे (कहीं) अधिक हानि करता है।

४३. न तं माता पिता कयिरा, अञ्जे वापि च जातका।  
सम्मापणिहितं चित्तं, सेय्यसो नं ततो करे॥

जितनी (भलाई) न माता-पिता कर सकते हैं, न दूसरे भाई-बंधु, उससे (कहीं अधिक) भलाई सन्मार्ग पर लगा हुआ चित्त करता है।

चित्तवग्गो ततियो निड्डितो।



## ४. पुष्पवग्गो

४४. को इमं पथविं विचेस्सति, यमलोकञ्च इमं सदेवकं ।  
को धम्मपदं सुदेसितं, कुसलो पुष्पमिव पचेस्सति ॥

कौन है जो इस (आत्मभाव अथवा अपनापे रूपी) पृथ्वी, और देवताओं सहित इस यमलोक को (बींध कर इनका) साक्षात्कार कर लेगा? कौन कुशल (व्यक्ति) भली प्रकार उपदिष्ट धर्म के पदों का पुष्प की भांति (चयन करते हुए इनको भी बींध कर इनका) साक्षात्कार कर पायगा?

४५. सेखो पथविं विचेस्सति, यमलोकञ्च इमं सदेवकं ।  
सेखो धम्मपदं सुदेसितं, कुसलो पुष्पमिव पचेस्सति ॥

शैक्ष्य (निर्वाण की खोज में लगा हुआ व्यक्ति) ही पृथ्वी पर, और देवताओं सहित इस यमलोक पर, विजय पायगा। शैक्ष्य (ही) भली प्रकार उपदिष्ट धर्म के पदों का पुष्प की भांति चयन करेगा।

४६. फेणूपमंकायमिमंविदित्वा, मरीचिधम्मंअभिसम्बुधानो ।  
छेत्वानमारस्सपपुष्फकानि, अदस्सनंमच्चुराजस्सगच्छे ॥

इस शरीर को फेन (झाग) के समान (या) (मरु-)मरीचिका के समान (निःसार) जान कर मार के फंदों को काट कर मृत्युराज की दृष्टि से ओझल रहे।

४७. पुष्फानि हेव पचिनन्तं, ब्यासत्तमनसं नरं ।  
सुत्तं गामं महोघोव, मच्चु आदाय गच्छति ॥

(कामभोगरूपी) पुष्पों को चुनने वाले, आसक्तियों में डूबे हुए मनुष्य को मृत्यु (वैसे ही) पकड़ कर ले जाती है जैसे सोये हुए गांव को (नदी की) बड़ी बाढ़ (बहा ले जाती है)।

४८. पुष्फानि हेव पचिनन्तं, ब्यासत्तमनसं नरं ।  
अतित्तज्जेव कामेसु, अन्तको कुरुते वसं ॥

(कामभोगरूपी) पुष्पों को चुनने वाले, आसक्तियों में डूबे हुए मनुष्य को (जबकि अभी वह) कामनाओं से तृप्त नहीं हुआ है, यमराज अपने वश में कर लेता है।

४९. यथापि भमरो पुष्पं, वण्णगन्धमहेठयं ।  
पलेति रसमादाय, एवं गामे मुनी चरे ॥

जैसे भ्रमर फूल के वर्ण और गंध को क्षति पहुँचाये बिना रस को लेकर चल देता है, वैसे ही गांव में मुनि भिक्षाटन करे।

५०. न परेसं विलोमानि, न परेसं कताकतं ।  
अत्तनोव अवेक्खेय्य, कतानि अकतानि च ॥

दूसरों के परुष (मर्मच्छेदक) वचनों पर ध्यान न दे, न दूसरों के कृत-अकृत को देखे, (तद्विपरीत) अपने (ही) कृत-अकृत को देखे।

५१. यथापि रुचिरं पुष्पं, वण्णवन्तं अगन्धकं ।  
एवं सुभासिता वाचा, अफला होति अकुब्बतो ॥

जैसे कोई पुष्प सुंदर और वर्णयुक्त होने पर भी गंधरहित हो, वैसे ही अच्छी कही हुई (बुद्ध) वाणी होती है फलरहित, यदि कोई तदनुसार (आचरण) न करे।

५२. यथापि रुचिरं पुष्पं, वण्णवन्तं सुगन्धकं ।  
एवं सुभासिता वाचा, सफला होति कुब्बतो ॥

जैसे कोई पुष्प सुंदर और वर्णयुक्त हो और (सु-) गंध वाला हो, वैसे ही अच्छी कही हुई (बुद्ध) वाणी होती है फलसहित, यदि कोई तदनुसार (आचरण) करने वाला हो।

५३. यथापि पुष्परासिम्हा, कयिरा मालागुणे बहू ।  
एवं जातेन मच्चेन, कत्तब्बं कुसलं बहुं ॥

जैसे (कोई व्यक्ति) पुष्प-राशि से बहुत सी मालाएं बनाये, ऐसे ही उत्पन्न हुए प्राणी को बहुत-सा कुशलकर्म (पुण्य) करना चाहिए।

५४. न पुष्पगन्धो पटिवातमेति, न चन्दनं तगरमल्लिका वा ।  
सतञ्च गन्धो पटिवातमेति, सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवायति ॥

चंदन, तगर, कमल अथवा जूही - इन (सभी) की सुगंधों से शील-सदाचार की सुगंध बढ़-चढ़ कर है।

५५. चन्दनं तगरं वापि, उप्पलं अथ वस्सिकी ।  
एतेसं गन्धजातानं, सीलगन्धो अनुत्तरो ॥

तगर और चंदन की गंध, उत्पल (कमल) और चमेली की गंध - इन भिन्न-भिन्न सुगंधियों से शील की गंध अधिक श्रेष्ठ है।

५६. अप्पमत्तो अयं गन्धो, ख्यायं तगरचन्दनं।  
यो च शीलवतं गन्धो, वाति देवेषु उत्तमो ॥

तगर और चंदन की जो यह गंध फैलती है, वह अल्पमात्र है, और जो यह शीलवानों की गंध है, वह उत्तम (गंध) देवताओं में फैलती है।

५७. तेसं सम्पन्नसीलानं, अप्पमादविहारिनं।  
सम्मदज्जा विमुत्तानं, मारो मगं न विन्दति ॥

जो शीलसंपन्न हैं, प्रमादरहित होकर विहार करते हैं, यथार्थ ज्ञान द्वारा मुक्त हो चुके हैं, उनके मार्ग को मार नहीं देख पाता।

५८. यथा सङ्कारठानस्मिं, उज्झितस्मिं महापथे।  
पदुमं तत्थ जायेथ, सुचिगन्धं मनोरमं ॥

५९. एवं सङ्कारभूतेसु, अन्धभूते पुथुज्जने।  
अतिरोचति पज्जाय, सम्मासम्बुद्धसावको ॥

जिस प्रकार महापथ पर फेंके गये कचरे के ढेर में पवित्र गंध वाला मनोरम पद्म उत्पन्न हो जाता है, उसी प्रकार (कचरे के समान) भगवान् सम्यक्संबुद्ध का श्रावक भी अपनी प्रज्ञा से अंधे पृथग्जनों के बीच अत्यंत शोभायमान होता है।

पुष्पवग्गो चतुत्थो निद्धितो।

## ५. बालवग्गो

६०. दीघा जागरतो रत्ति, दीघं सन्तस्स योजनं।  
दीघो बालानं संसारो, सद्धम्मं अविजानतं॥

जागने वाले की रात लंबी हो जाती है, थके हुए का योजन लंबा हो जाता है। सद्धर्म को न जानने वाले मूर्ख (व्यक्तियों) के लिए संसार (-चक्र) लंबा हो जाता है।

६१. चरञ्चे नाधिगच्छेय्य, सेय्यं सदिसमत्तनो।  
एकचरियं दब्धं कयिरा, नत्थि बाले सहायता॥

यदि विचरण करते हुए (शील, समाधि, प्रज्ञा में) अपने से श्रेष्ठ या अपने सदृश (सहचर) न मिले, तो दृढता के साथ अकेला ही विचरण करे। मूर्ख (व्यक्ति) से सहायता नहीं मिल सकती।

६२. पुत्ता मत्थि धनमत्थि, इति बालो विहञ्जति।  
अत्ता हि अत्तनो नत्थि, कुतो पुत्ता कुतो धनं॥

‘मेरे पुत्र!’ ‘मेरा धन!’ - इस (मिथ्या चिंतन) में ही मूढ़ व्यक्ति व्याकुल बना रहता है। अरे, जब यह (तन और मन का) अपनापा ही अपना नहीं है, तो कहां ‘मेरे पुत्र!’? कहां ‘मेरा धन!’?

६३. यो बालो मञ्जति बाल्यं, पण्डितो वापि तेन सो।  
बालो च पण्डितमानी, स वे “बालो”ति वुच्चति॥

जो मूढ़ होकर (अपनी) मूढ़ता को स्वीकारता है, वह इस (अंश) में पंडित (ज्ञानी) है; और जो मूढ़ होकर (अपने आप को) पंडित मानता है, वह ‘मूढ़’ ही कहा जाता है।

६४. यावजीवम्पि चे बालो, पण्डितं पयिरुपासति।  
न सो धम्मं विजानाति, दब्बी सूपरसं यथा॥

चाहे मूढ़ (व्यक्ति) जीवन-भर पंडित की सेवा में रहे, वह धर्म को (वैसे ही) नहीं जान पाता जैसे कलुषी सूप के रस को।

६५. मुहुत्तमपि चे विञ्जू, पण्डितं पयिरुपासति।  
खिप्पं धम्मं विजानाति, जिह्वा सूपरसं यथा॥

चाहे विज्ञ पुरुष मुहूर्त भर ही पंडित की सेवा में रहे, वह शीघ्र ही धर्म को (वैसे) जान लेता है जैसे जिह्वा सूप के रस को।

६६. चरन्ति बाला दुम्मेधा, अमित्तेनेव अत्तना।  
करोन्ता पापकं कम्मं, यं होति कटुकफलं ॥

बाल-बुद्धि वाले मूर्ख जन अपने ही शत्रु बन कर आचरण करते हैं और ऐसे पापकर्म करते हैं जिनका फल (स्वयं उनके अपने लिए ही) कड़ुवा होता है।

६७. न तं कम्मं कतं साधु, यं कत्वा अनुत्पत्ति।  
यस्स अस्सुमुखो रोदं, विपाकं पटिसेवति ॥

वह किया हुआ कर्म ठीक नहीं जिसे करके पीछे पछताना पड़े, और जिसके फल को अशुमुख हो रोते हुए भोगना पड़े।

६८. तच्च कम्मं कतं साधु, यं कत्वा नानुत्पत्ति।  
यस्स पतीतो सुमनो, विपाकं पटिसेवति ॥

और वह किया हुआ कर्म ठीक होता है जिसे करके पीछे पछताना न पड़े, और जिसके फल को प्रसन्नचित्त होकर अच्छे मन से भोगा जा सके।

६९. मधुवा मज्जति बालो, याव पापं न पच्चति।  
यदा च पच्चति पापं, बालो दुक्खं निगच्छति ॥

जब तक पाप का फल नहीं आता तब तक मूढ़ (व्यक्ति) उसे मधु के समान (मधुर) मानता है, और जब पाप का फल आता है तब (वह) मूढ़ दुःखी होता है।

७०. मासे मासे कुसग्गेन, बालो भुज्जेय्य भोजनं।  
न सो सङ्घातधम्मानं, कलं अग्घति सोळ्ळसिं ॥

चाहे मूढ़ (व्यक्ति) महीना-महीना (के अंतराल) पर केवल कुश की नोक से भोजन करे, तो भी वह धर्मवेत्ताओं (की कुशल चेतना) के सोलहवें भाग की बराबरी भी नहीं कर सकता।

७१. न हि पापं कतं कम्मं, सज्जु खीरंव मुच्चति।  
उहन्तं बालमन्वेति, भस्मच्छन्नोव पावको ॥

जैसे ताजा दूध शीघ्र नहीं जमता, उसी तरह किया गया पाप कर्म शीघ्र (अपना) फलें नहीं लाता। राख से ढंकी आग की तरह जलता हुआ वह मूर्ख का पीछा करता है।

७२. यावदेव अनत्थाय, जतं बालस्स जायति।  
हन्ति बालस्स सुक्कंसं, मुद्धमस्स विपातयं॥

मूढ़ का जितना भी ज्ञान है (वह उसके) अनिष्ट के लिए होता है। वह उसकी मूर्धा (सिर=प्रज्ञा) को गिरा कर उसके कुशल कर्मों का नाश कर डालता है।

७३. असन्तं भावनमिच्छेय्य, पुरेक्खारञ्च भिक्खुसु।  
आवासेसु च इस्सरियं, पूजा परकुलेसु च॥

(मूढ़ व्यक्ति) जो नहीं है उसकी संभावना जगाता है, भिक्षुओं में अग्रणी (बनना चाहता है), संघ के आवासों (विहारों) का स्वामित्व (चाहता है) और पराये कुलों में आदर-सत्कार की कामना करता है।

७४. ममेव कत मज्जन्तु, गिहीपब्बजिता उभो।  
ममेवातिवसा अस्सु, किच्चाकिच्चेसु किस्मिचि।  
इति बालस्स सङ्गप्पो, इच्छा मानो च वड्ढति॥

गृहस्थ और प्रव्रजित दोनों मेरा ही किया मानें, किसी भी कृत्य-अकृत्य में मेरे ही वशवर्ती रहें - ऐसा मूढ़ (व्यक्ति) का संकल्प होता है। (इससे) उसकी इच्छा और अभिमान का संवर्द्धन होता है।

७५. अज्जा हि लाभूपनिसा, अज्जा निब्बानगामिनी।  
एवमेतं अभिज्जाय, भिक्खु बुद्धस्स सावको।  
सक्कारं नाभिनन्देय्य, विवेकमनुब्रूहये॥

लाभ का मार्ग दूसरा है और निर्वाण की ओर ले जाने वाला दूसरा - इस प्रकार इसे भली प्रकार जान कर बुद्ध का श्रावक भिक्षु (आदर-) सत्कार की इच्छा न करे और (त्रिविध) विवेक (अर्थात् काय विवेक, चित्त विवेक, विक्खम्भन विवेक) को बढ़ावा दे।

बालवग्गो पञ्चमो निट्ठितो।

## ६. पण्डितवग्गो

७६. निधीनं पवत्तारं, यं पस्से वज्जदस्सिनं।  
निग्गह्वादिं मेधाविं, तादिसं पण्डितं भजे।  
तादिसं भजमानस्स, सेय्यो होति न पापियो ॥

जो व्यक्ति अपना दोष दिखाने वाले को (भूमि में छिपी) संपदा दिखाने वाले की तरह समझे, जो संयम की बात करने वाले मेधावी पंडित की संगति करे, उस व्यक्ति का मंगल ही होता है, अमंगल नहीं।

७७. ओवदेय्यानुसासेय्य, असब्भा च निवारये।  
सतज्झि सो पियो होति, असतं होति अप्पियो ॥

जो उपदेश दे, अनुशासन करे, अनुचित कार्य से रोके, वह सत्पुरुषों का प्रिय होता है और असत्पुरुषों का अप्रिय।

७८. न भजे पापके मित्ते, न भजे पुरिसाधमे।  
भजेथ मित्ते कल्याणे, भजेथ पुरिसुत्तमे ॥

न पापी मित्रों की संगत करे, न अधम पुरुषों की। संगति करे कल्याणमित्रों की, उत्तम पुरुषों की।

७९. धम्मपीति सुखं सेति, विप्पसन्नेन चेतसा।  
अरियप्पवेदिते धम्मे, सदा रमति पण्डितो ॥

बुद्ध के उपदेशित धर्म में सदा रमण करता है पंडित। (नवविध लोकोत्तर) धर्म (रस) का पान करने वाला विशुद्धचित्त हो सुखपूर्वक विहार करता है।

८०. उदकज्झि नयन्ति नेत्तिका, उसुकारा नमयन्ति तेजनं।  
दारुं नमयन्ति तच्छका, अत्तानं दमयन्ति पण्डिता ॥

पानी ले जाने वाले (जिधर चाहते हैं, उधर ही से) पानी को ले जाते हैं, बाण बनाने वाले बाण को (तपा कर) सीधा करते हैं, बड़ई लकड़ी को (अपनी रुचि के अनुसार) सीधा या बांका करते हैं, और पंडित (जन) अपना (ही) दमन करते हैं।

८१. सेलो यथा एकघनो, वातेन न समीरति।  
एवं निन्दापसंसासु, न समिज्जन्ति पण्डिता ॥

जैसे सघन शैल-पर्वत वायु से प्रकंपित नहीं होता, वैसे ही समझदार लोग निंदा और प्रशंसा (वस्तुतः, आठों लोकधर्मों) से विचलित नहीं होते।

८२. यथापि रहदो गम्भीरो, विष्पसन्नो अनाविलो ।  
एवं धम्मानि सुत्वान, विष्पसीदन्ति पण्डिता ॥

(देशना-) धर्मों को सुनकर पंडित (जन) गहरे, स्वच्छ, निर्मल सरोवर के समान अत्यंत प्रसन्न (संतुष्ट) होते हैं।

८३. सब्बत्थ वे सम्पुरिसा चजन्ति,  
न कामकामा लपयन्ति सन्तो ।  
सुखेन फुट्टा अथ वा दुखेन,  
न उच्चावचं पण्डिता दस्सयन्ति ॥

सत्पुरुष सर्वत्र (पांचों स्कंधों में) छंदराग छोड़ देते हैं। संत जन कामभोगों के लिए बात नहीं चलाते। चाहे सुख मिले या दुःख, पंडित (जन) (अपने मन का) उतार-चढ़ाव प्रदर्शित नहीं करते।

८४. न अत्तहेतु न परस्स हेतु,  
न पुत्तमिच्छे न धनं न रट्टं ।  
न इच्छेय्य अधम्मेन समिद्धिमत्तनो,  
स सीलवा पज्जवा धम्मिको सिया ॥

जो अपने लिए या दूसरे के लिए पुत्र, धन अथवा राज्य की कामना नहीं करता और न अधर्म से अपनी उन्नति चाहता है, वह शीलवान, प्रज्ञावान और धार्मिक होता है।

८५. अप्पका ते मनुस्सेसु, ये जना पारगामिनो ।  
अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति ॥

मनुष्यों में (भवसागर से) पार जाने वाले लोग विरले ही होते हैं। ये दूसरे लोग तो (सत्कायदृष्टिरूपी) तट पर ही दौड़ने वाले होते हैं।

८६. ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो ।  
ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेय्यं सुदुत्तरं ॥



जो लोग सम्यक प्रकार से आख्यात धर्म का अनुवर्तन करते हैं, वे अति दुस्तर मृत्यु-क्षेत्र के पार चले जायेंगे।

८७. कण्हं धम्मं विप्पहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो।  
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं॥

पंडित कृष्ण धर्म को त्याग कर शुक्ल (धर्म) की भावना करे (अर्थात्, पापकर्म को छोड़ कर शुभ कर्म करे।) वह घर से बेघर होकर (सामान्य व्यक्ति के लिए) आकर्षणरहित एकांत का सेवन करे।

८८. तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामे अकिञ्चनो।  
परियोदपेय्य अत्तानं, चित्तक्लेसेहि पण्डितो॥

कामनाओं को त्याग कर अकिंचन (बना हुआ व्यक्ति) वहीं (उसी अवस्था में) रमण करने की इच्छा करे। समझदार (व्यक्ति) (पांच नीवरणरूपी) चित्त-मलों से अपने आपको परिशुद्ध करे।

८९. येसं सम्बोधियङ्गेषु, सम्मा चित्तं सुभावितं।  
आदानपटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता।  
खीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता॥

संबोधि के अंगों में जिनका चित्त सम्यक प्रकार से भावित (अभ्यस्त) हो गया है, जो परिग्रह का परित्याग कर अपरिग्रह में रत हैं, आश्रवों (चित्तमलों) से रहित ऐसे द्युतिमान (पुरुष ही) लोक में निर्वाण-प्राप्त हैं।

पण्डितवग्गो छट्ठो निट्ठितो।

९०. गतद्धिनो विसोकस्स, विप्पमुत्तस्स सब्बधि।  
सब्बगन्थप्पहीनस्स, परिळाहो न विज्जति ॥

जिसकी यात्रा पूरी हो गयी है, जो शोकरहित है, सर्वथा विमुक्त है, जिसकी सभी ग्रंथियां कट गयी हैं, उसके लिए (कायिक और चैतसिक) संताप (नाम की कोई चीज) नहीं है।

९१. उय्युज्जन्ति सतीमन्तो, न निकेते रमन्ति ते।  
हंसाव पल्ललं हित्वा, ओकमोकं जहन्ति ते ॥

स्मृतिमान उद्योग करते रहते हैं, वे घर में रमण नहीं करते। जैसे हंस क्षुद्र जलाशय को छोड़ कर चले जाते हैं, वैसे ही वे घर-बार (अथवा, सभी ठौर-ठिकानों को) छोड़ देते हैं।

९२. येसं सन्नचयो नत्थि, ये परिज्जातभोजना।  
सुज्जतो अनिमित्तो च, विमोक्खो येसं गोचरो।  
आकासे व सकुन्तानं, गति तेसं दुरन्नया ॥

जो (कर्मों और प्रत्ययों का) संचय नहीं करते, जिन्हें (अपने) आहार (की मात्रा का) पूरा पूरा ज्ञान है, शून्यतास्वरूप तथा निमित्तरहित निर्वाण जिनकी गोचरभूमि है, उनकी गति वैसे ही अज्ञेय रहती है जैसे आकाश में पक्षियों की (गति)।

९३. यस्सासवा परिक्खीणा, आहारे च अनिस्सितो।  
सुज्जतो अनिमित्तो च, विमोक्खो यस्स गोचरो।  
आकासे व सकुन्तानं, पदं तस्स दुरन्नयं ॥

जिसके आश्रव (चित्त-मल) पूरी तरह से क्षीण हो गये हैं, जो आहार में आसक्त नहीं है, शून्यतास्वरूप तथा निमित्तरहित निर्वाण जिनकी गोचरभूमि है, उनकी गति वैसे ही अज्ञेय रहती है जैसे आकाश में पक्षियों की (गति)।

९४. यस्सिन्द्रियानि समथङ्गतानि, अस्सा यथा सारथिना सुदन्ता।  
पहीनमानस्स अनासवस्स, देवापि तस्स पिहयन्ति तादिनो ॥

सारथि द्वारा सुदांत (सुशिक्षित) घोड़ों के समान जिसकी इंद्रियां शांत हो गयी

हैं, जिसका अभिमान विगलित हो गया है, जो आश्रवरहित है, देवगण भी वैसे (व्यक्ति) की स्पृहा करते हैं।

१५. पथविसमो नो विरुज्झति, इन्दखिलुपमो तादि सुब्बतो।  
रहदोव अपेतकदमो, संसारा न भवन्ति तादिनो॥

सुंदर व्रतधारी अर्हत (=तादि) पृथ्वी के समान क्षुब्ध न होने वाला और इंद्रकील के समान अकंप्य होता है। वैसे (व्यक्ति) को कर्दमरहित जलाशय की भांति संसार (-मल) नहीं होते।

१६. सन्तं तस्स मनं होति, सन्ता वाचा च कम्म च।  
सम्मदज्जा विमुत्तस्स, उपसन्तस्स तादिनो॥

सम्यक ज्ञान द्वारा मुक्त हुए उपशांत (अरहंत) का मन शांत हो जाता है, और वाणी तथा कर्म भी शांत हो जाते हैं।

१७. अस्सद्धो अकतञ्जू च, सन्धिच्छेदो च यो नरो।  
हतावकासो वन्तासो, स वे उत्तमपोरिसो॥

जो नर (अंध-) श्रद्धारहित, निर्वाण का जानकार, (भव-संसरण की) संधि का छेदन किये हुए, (पुनर्जन्म की) संभावनारहित और (सर्वप्रकार की) आशाएं त्यागे हुए हो, वह निःसंदेह उत्तम पुरुष होता है।

१८. गामे वा यदि वारज्जे, निन्ने वा यदि वा थले।  
यत्थ अरहन्तो विहरन्ति, तं भूमिरामणेव्यकं॥

गांव हो या जंगल, भूमि नीची हो या (ऊंची), जहां (कहीं) अरहंत विहार करते हैं, वह भूमि रमणीय होती है।

१९. रमणीयानि अरज्जानि, यत्थ न रमती जनो।  
वीतरागा रमिस्सन्ति, न ते कामगवेसिनो॥

रमणीय वन जहां (सामान्य) व्यक्ति रमण नहीं करते, (वहां) वीतराग (क्षीणाश्रव) रमण करेंगे (क्योंकि) वे कामभोगों की खोज में नहीं रहते।

अरहन्तवग्गो सत्तमो निट्ठितो।

## ८. सहस्सवग्गो

१००. सहस्समपि चे वाचा, अनत्थपदसंहिता।  
एकं अत्थपदं सेय्यो, यं सुत्वा उपसम्मति ॥

निरर्थक पदों से युक्त हजार वचनों की अपेक्षा एक (अकेला) सार्थक पद श्रेयस्कर होता है जिसे सुनकर (कोई व्यक्ति) (रागादि के उपशमन से) शांत हो जाता है।

१०१. सहस्समपि चे गाथा, अनत्थपदसंहिता।  
एकं गाथापदं सेय्यो, यं सुत्वा उपसम्मति ॥

निरर्थक पदों से युक्त हजार गाथाओं की अपेक्षा (वह) एक (अकेला सार्थक) गाथापद श्रेयस्कर होता है जिसे सुनकर (कोई व्यक्ति) शांत हो जाता है।

१०२. यो च गाथा सतं भासे, अनत्थपदसंहिता।  
एकं धम्मपदं सेय्यो, यं सुत्वा उपसम्मति ॥

जो (कोई) निरर्थक पदों से युक्त सौ गाथाएं बोले उसकी अपेक्षा एक (अकेला सार्थक) धर्मपद श्रेयस्कर होता है जिसे सुन कर (कोई व्यक्ति) शांत हो जाता है।

१०३. यो सहस्सं सहस्सेन, सङ्गामे मानुसे जिने।  
एकञ्च जेय्यमत्तानं, स वे सङ्गामजुत्तमो ॥

हजारों हजार मनुष्यों को संग्राम में जीतने वाले से भी एक अपने आपको जीतने वाला कहीं उत्तम संग्राम-विजेता होता है।

१०४. अत्ता हवे जितं सेय्यो, या चायं इतरा पजा।  
अत्तदन्तस्स पोसस्स, निच्चं सञ्जतचारिणो ॥

इन अन्य लोगों को (द्यूत, धन-हरण, संग्राम अथवा बलाभिभव द्वारा) जीतने की अपेक्षा अपने आपको जीतना ही श्रेयस्कर है। जिस व्यक्ति ने स्वयं को दांत बना लिया है और जो अपने आपको नित्य संयत रखता है -

१०५. नेव देवो न गन्धब्बो, न मारो सह ब्रह्मना।  
जितं अपजितं कयिरा, तथारूपस्स जन्तुनो ॥

उस प्रकार के व्यक्ति की जीत को न तो देव, न गंधर्व और न (ही) ब्रह्मा सहित मार (ही) पराजय में बदल सकते हैं।

१०६. मासे मासे सहस्सेन, यो यजेथ सतं समं।  
एकञ्च भावित्तानं, मुहुत्तमपि पूजये।  
सायेव पूजना सेय्यो, यञ्चे वस्ससतं हुतं॥

जो (कोई) सौ वर्षों तक महीने-महीने हजार रुपये से यज्ञ करे और (स्रोतापन्न से लेकर क्षीणाश्रव तक) (किसी) भावितात्म (व्यक्ति की) मुहूर्त-भर ही पूजा कर ले तो सौ वर्षों के यज्ञ की अपेक्षा वह (मुहूर्त-भर की) पूजा ही श्रेयस्कर होती है।

१०७. यो च वस्ससतं जन्तु, अग्निं परिचरे वने।  
एकञ्च भावित्तानं, मुहुत्तमपि पूजये।  
सायेव पूजना सेय्यो, यञ्चे वस्ससतं हुतं॥

जो कोई व्यक्ति सौ वर्षों तक वन में अग्निहोत्र करे और (किसी) भावितात्म (व्यक्ति की) मुहूर्त भर ही पूजा कर ले, तो सौ वर्षों के हवन से वह (मुहूर्त भर की) पूजा ही श्रेयस्कर होती है।

१०८. यं किञ्चि यिट्ठं व हुतं व लोके, संवच्छरं यजेथ पुञ्जपेक्खो।  
सब्बम्पि तं न चतुभागमेति, अभिवादना उज्जुगतेसु सेय्यो॥

पुण्य की इच्छा से जो कोई संसार में वर्ष-भर यज्ञ-हवन करे, तो भी वह (स्रोतापन्न से लेकर क्षीणाश्रव की किसी अवस्था को प्राप्त) सरलचित्त (व्यक्तियों) को किये जाने वाले अभिवादन के चतुर्थांश के बराबर भी नहीं होता।

१०९. अभिवादनसीलिस्स, निच्चं वुट्ठापचायिनो।  
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति, आयु वण्णो सुखं बलं॥

जो अभिवादनशील है (और) नित्य बड़े-बूढ़ों की सेवा करता है, उसकी (ये) चार बातें बढ़ती हैं - आयु, वर्ण, सुख और बल।

११०. यो च वस्ससतं जीवे, दुस्सीलो असमाहितो।  
एकाहं जीवितं सेय्यो, सीलवन्तस्स ज्ञायिनो॥

दुःशील और चित्त की एकाग्रता से रहित (व्यक्ति) के सौ वर्ष के जीवन से शीलवान और ध्यानी (व्यक्ति) का एक दिन का जीवन श्रेयस्कर होता है।

१११. यो च वस्ससतं जीवे, दुप्पज्जो असमाहितो।

एकाहं जीवितं सेय्यो, पज्जवन्तस्स ज्ञायिनो॥

दुष्प्रज्ञ और चित्त की एकाग्रता से रहित (व्यक्ति) के सौ वर्ष के जीवन से प्रज्ञावान और ध्यानी (व्यक्ति) का एक दिन का जीवन श्रेयस्कर होता है।

११२. यो च वस्ससतं जीवे, कुसीतो हीनवीरियो।

एकाहं जीवितं सेय्यो, वीरियमारभतो दब्बं॥

आलसी और उद्योगरहित (व्यक्ति) के सौ वर्ष के जीवन से दृढ़ उद्योग करने वाले (व्यक्ति) का एक दिन का जीवन श्रेयस्कर होता है।

११३. यो च वस्ससतं जीवे, अपस्सं उदयब्बयं।

एकाहं जीवितं सेय्यो, पस्सतो उदयब्बयं॥

(पंचस्कंध के) उदय-व्यय को न देखने वाले (व्यक्ति) के सौ वर्ष के जीवन से उदय-व्यय को देखने वाले (व्यक्ति) का एक दिन का जीवन श्रेयस्कर होता है।

११४. यो च वस्ससतं जीवे, अपस्सं अमतं पदं।

एकाहं जीवितं सेय्यो, पस्सतो अमतं पदं॥

अमृत-पद (निर्वाण) को न देखने वाले (व्यक्ति) के सौ वर्ष के जीवन से अमृत-पद को देखने वाले (व्यक्ति) का एक दिन का जीवन श्रेयस्कर होता है।

११५. यो च वस्ससतं जीवे, अपस्सं धम्ममुत्तमं।

एकाहं जीवितं सेय्यो, पस्सतो धम्ममुत्तमं॥

उत्तम धर्म (नवविध लोकोत्तर धर्म अर्थात् चार मार्ग, चार फल और निर्वाण) को न देखने वाले व्यक्ति के सौ वर्ष के जीवन से उत्तम धर्म को देखने वाले (व्यक्ति) का एक दिन का जीवन श्रेयस्कर होता है।

सहस्सवग्गो अट्टमो निट्ठितो।

## १. पापवग्गो

११६. अभित्थरेथ कल्याणे, पापा चित्तं निवारये।  
दन्धञ्जि करोतो पुञ्जं, पापस्मिं रमती मनो ॥

पुण्य (कर्म) करने में जल्दी करे, पाप (कर्म) से चित्त को हटाये, क्योंकि धीमी गति से पुण्य (कर्म) करने वाले का मन पाप (कर्म) में लीन होने लगता है।

११७. पापञ्चे पुरिसो कयिरा, न नं कयिरा पुनप्पुनं।  
न तम्हि छन्दं कयिराथ, दुक्खो पापस्स उच्चयो ॥

यदि पुरुष (कभी) पाप (कर्म) कर डाले, तो उसे बार-बार (तो) न करे। वह उसमें रुचि न ले, क्योंकि पाप (कर्मों) का संचय दुःख (का कारण) होता है।

११८. पुञ्जञ्चे पुरिसो कयिरा, कयिरा नं पुनप्पुनं।  
तम्हि छन्दं कयिराथ, सुखो पुञ्जस्स उच्चयो ॥

यदि पुरुष (कभी) पुण्य (कर्म) करे, तो उसे बार-बार करे। वह उसके प्रति उत्साह जगाये, (क्योंकि) पुण्य (कर्मों) का संचय सुख (का कारण) होता है।

११९. पापोपि पस्सति भद्रं, याव पापं न पच्चति।  
यदा च पच्चति पापं, अथ पापो पापानि पस्सति ॥

पापी भी (पाप को) (तब तक) अच्छा ही समझता है जब तक पाप का विपाक नहीं होता। और जब पाप का विपाक होता है, तब पापी पापों को देखने लगता है।

१२०. भद्रोपि पस्सति पापं, याव भद्रं न पच्चति।  
यदा च पच्चति भद्रं, अथ भद्रो भद्रानि पस्सति ॥

भद्र (पुण्य करने वाला व्यक्ति) भी तब तक पाप को देखता है जब तक पुण्य का विपाक नहीं होता। जब पुण्य का परिपाक होता है, तब (वह) भद्र (व्यक्ति) पुण्यों को देखने लगता है।

१२१. मावमञ्जेथ पापस्स, न मं तं आगमिस्सति।  
उदबिन्दुनिपातेन, उदकुम्भोपि पूरति।  
बालो पूरति पापस्स, थोकं थोकम्पि आचिनं ॥

‘वह मेरे पास नहीं आयगा’ - ऐसा (सोच कर) पाप की अवहेलना न करे। बूंद

बूंद पानी गिरने से घड़ा भर जाता है। (ऐसे ही) थोड़ा थोड़ा संचय करता हुआ मूढ़ (व्यक्ति भी) पाप से भर जाता है।

१२२. मावमञ्जेथ पुञ्जस्स, न मं तं आगमिस्सति ।  
उदबिन्दुनिपातेन, उदकुम्भोपि पूरति ।  
धीरो पूरति पुञ्जस्स, थोकं थोकम्पि आचिनं ॥

‘वह मेरे पास नहीं आयगा’ - ऐसा (सोच कर) पुण्य की अवहेलना न करे। बूंद बूंद पानी गिरने से घड़ा भर जाता है। (ऐसे ही) थोड़ा थोड़ा संचय करता हुआ धीर (व्यक्ति) पुण्य से भर जाता है।

१२३. वाणिजोव भयं मग्गं, अप्पसत्थो महद्धनो ।  
विसं जीवितुकामोव, पापानि परिवज्जये ॥

जैसे छोटे काफिले (परंतु) विपुल धन वाला व्यापारी भययुक्त मार्ग को, अथवा जीवित रहने की इच्छा वाला (व्यक्ति) विष को (छोड़ देता है), (वैसे ही) (मनुष्य) पापों को छोड़ दे।

१२४. पाणिहिं चे वणो नास्स, हरेय्य पाणिना विसं ।  
नाब्बणं विसमन्वेत्ति, नत्थि पापं अकुब्बतो ॥

यदि हाथ में व्रण (घाव) न हो तो हाथ से विष को ले सकता है (क्योंकि) व्रणरहित (घावरहित) (शरीर में) विष नहीं चढ़ता है। (ऐसे ही) (पापकर्म) न करने वाले को पाप नहीं लगता।

१२५. यो अप्पदुट्ठस्स नरस्स दुस्सति, सुद्धस्स पोसस्स अनङ्गणस्स ।  
तमेव बालं पच्चेत्ति पापं, सुखुमो रजो पटिवातं व खित्तो ॥

जो निरपराध, निर्मल, दोषरहित व्यक्ति पर दोषारोपण करता है, उस (दोष लगाने वाले) मूर्ख को ही पाप लगता है; (जैसे कि) पवन की उल्टी दिशा में फेंकी गयी सूक्ष्म रज (फेंकने वाले पर ही आ गिरती है)।

१२६. गब्भमेके उप्पज्जन्ति, निरयं पापकम्मिनो ।  
सग्गं सुगतिनो यन्ति, परिनिब्बन्ति अनासवा ॥

कोई (मनुष्य लोक में) गर्भ में उत्पन्न होते हैं, पापकर्मी नरक में (जाते हैं), सुगति वाले स्वर्ग में जाते हैं, और अनाश्रव (चित्तमलरहित) निर्वाण-लाभ करते हैं।



१२७. न अन्तलिक्खे न समुद्दमज्झे, न पब्बतानं विवरं पविस्स ।  
न विज्जती सो जगतिप्पदेसो, यत्थद्धितो मुच्चेय्य पापकम्मा ॥

न (अनंत) आकाश में, न समुद्र (की गहराइयों) में, न पर्वतों की (गुहा-) कंदराओं में प्रवेश करके - (इस) जगत में, कहीं भी तो ऐसा स्थान नहीं है जहां ठहरा हुआ (कोई) अपने पापकर्मों (अकुशल संस्कारों के कर्मफलों) को भोगने से बच सके।

१२८. न अन्तलिक्खे न समुद्दमज्झे, न पब्बतानं विवरं पविस्स ।  
न विज्जती सो जगतिप्पदेसो, यत्थद्धितं नप्पसहेय्यमच्चु ॥

न (अनंत) आकाश में, न समुद्र (की गहराइयों) में, न पर्वतों की (गुहा-) कंदराओं में प्रवेश करके - (इस) जगत में कहीं भी तो ऐसा स्थान नहीं है जहां ठहरे हुए को मृत्यु न पकड़ ले, न दबोच लें।

पापवग्गो नवमो निद्धितो।

## १०. दण्डवग्गो

१२९. सब्बे तसन्ति दण्डस्स, सब्बे भायन्ति मच्चुनो ।

अत्तानं उपमं कत्वा, न हनेय्य न घातये ॥

सभी दंड से डरते हैं। सभी को मृत्यु से भय लगता है। (अतः) (सभी को) अपने जैसा समझ कर न (किसी की) हत्या करे, न हत्या करने के लिए प्रेरित करे।

१३०. सब्बे तसन्ति दण्डस्स, सब्बेसं जीवितं पियं ।

अत्तानं उपमं कत्वा, न हनेय्य न घातये ॥

सभी दंड से डरते हैं। जीवित रहना सबको प्रिय लगता है। (अतः) (सभी को) अपने जैसा समझ कर न (किसी की) हत्या करे, न हत्या करने के लिए प्रेरित करे।

१३१. सुखकामानि भूतानि, यो दण्डेन विहिंसति ।

अत्तनो सुखमेसानो, पेच्च सो न लभते सुखं ॥

जो सुख चाहने वाले प्राणियों को, अपने सुख की चाह से, दंड से विहिंसित करता है (कष्ट पहुंचाता है), वह मर कर सुख नहीं पाता।

१३२. सुखकामानि भूतानि, यो दण्डेन न हिंसति ।

अत्तनो सुखमेसानो, पेच्च सो लभते सुखं ॥

जो सुख चाहने वाले प्राणियों को, अपने सुख की चाह से, दंड से विहिंसित नहीं करता (कष्ट नहीं पहुंचाता है), वह मर कर सुख पाता है।

१३३. मावोच फरुसं कच्चि, वुत्ता पटिवदेय्यु तं ।

दुक्खा हि सारम्भकथा, पटिदण्डा फुसेय्यु तं ॥

तुम किसी को कठोर वचन मत बोलो, बोलने पर (दूसरे भी) तुम्हें वैसे ही बोलेंगे। क्रोध या विवाद भरी वाणी दुःख है। उसके बदले में तुम्हें दंड मिलेगा।

१३४. सचे नेरेसि अत्तानं, कंसो उपहतो यथा ।

एस पत्तोसि निब्बानं, सारम्भो ते न विज्जति ॥

यदि (तुम) अपने आपको टूटे हुए कांसे के समान निःशब्द कर लो, तो

(समझो तुमने) निर्वाण पा लिया (क्योंकि) तुममें कोई विवाद नहीं रह गया, कोई प्रतिवाद नहीं रह गया।

१३५. यथा दण्डेन गोपालो, गावो पाजेति गोचरं।  
एवं जरा च मच्चु च, आयुं पाजेन्ति पाणिनं ॥

जैसे ग्वाला लाठी से गायों को चरागाह में हांक कर ले जाता है, वैसे ही बुढ़ापा और मृत्यु प्राणियों की आयु को हांक कर ले जाते हैं।

१३६. अथ पापानि कम्मनि, करं बालो न बुज्जति।  
सेहि कम्मेहि दुम्मेधो, अग्गिदद्धोव तप्पति ॥

बाल बुद्धि वाला मूर्ख (व्यक्ति) पापकर्म करते हुए होश नहीं रखता। (परंतु समय पाकर) अपने उन्हीं कर्मों के कारण वह दुर्मेध (दुर्बुद्धि) ऐसे तपता है जैसे आग से जला हो।

१३७. यो दण्डेन अदण्डेसु, अप्पदुट्ठेसु दुस्सति।  
दसन्नमज्जतरं ठानं, खिप्पमेव निगच्छति ॥

जो दंडरहितों (क्षीणाश्रवों) को दंड से (पीड़ित करता है) या निर्दोषों को दोष लगाता है, उसे इन दस बातों में से कोई एक बात शीघ्र ही होती है -

१३८. वेदनं फरुसं जानिं, सरीरस्स च भेदनं।  
गरुकं वापि आबाधं, चित्तक्खेपञ्च पापुणे ॥

(१) तीव्र वेदना, (२) हानि, (३) अंगभंग, (४) बड़ा रोग, (५) चित्तविक्षेप (उन्माद),

१३९. राजतो वा उपसग्गं, अब्भक्खानञ्च दारुणं।  
परिक्खयञ्च जातीनं, भोगानञ्च पभङ्गुरं ॥

(६) राजदंड, (७) कड़ी निंदा, (८) संबंधियों का विनाश, (९) भोगों का क्षय, अथवा

१४०. अथ वास्स अगारानि, अग्गि इहति पावको।  
कायस्स भेदा दुप्पज्जो, निरयं सोपपज्जति ॥

इसके घर को आग जला डालती है। शरीर छूटने पर वह दुष्प्रज्ञ नरक में उत्पन्न होता है।

१४१. न नग्गचरिया न जटा न पङ्का, नानासका थण्डिलसायिका वा ।  
रजोजल्लं उक्कुटिकप्पधानं, सोधेन्ति मच्चं अवितिण्णकङ्गं ॥

जिस मनुष्य के संदेह समाप्त नहीं हुए हैं उसकी शुद्धि न नंगे रहने से, न जटा (धारण करने) से, न कीचड़ (लपेटने) से, न उपवास करने से, न कड़ी भूमि पर सोने से, न कादा पोतने से, और न उकड़ूं बैठने से ही होती है।

१४२. अलङ्कृतो चेपि समं चरेय्य, सन्तो दन्तो नियतो ब्रह्मचारी ।  
सब्बेसु भूतेसु निधाय दण्डं, सो ब्राह्मणो सो समणो स भिक्खु ॥

(वस्त्र, आभूषण आदि से) अलंकृत रहते हुए भी यदि कोई शांत, दान्त, स्थिर (नियंत्रित), ब्रह्मचारी है तथा सारे प्राणियों के प्रति दंड त्याग कर समता का आचरण करता है, तो वह ब्राह्मण है, श्रमण है, भिक्षु है।

१४३. हिरीनिसेधो पुरिसो, कोचि लोकस्मि विज्जति ।  
यो निन्दं अपबोधेति, अस्सो भद्रो कसामिव ॥

संसार में कोई (कोई) पुरुष ऐसा भी होता है जो (स्वयं ही) लज्जा के मारे निषिद्ध (कर्म) नहीं करता। वह निंदा को नहीं सह सकता, जैसे सधा हुआ घोड़ा चाबुक को (नहीं सह सकता)।

१४४. अस्सो यथा भद्रो कसानिविद्धो, आतापिनो संवेगिनो भवाथ ।  
सद्दयाय सीलेन च वीरियेन च, समाधिना धम्मविनिच्छयेन च ।  
सम्पन्नविज्जाचरणा पतिस्सता, जहिस्सथ दुक्खमिदं अनप्पकं ॥

चाबुक खाये उत्तम घोड़े के समान उद्योगशील और संवेगशील बनो। श्रद्धा, शील, वीर्य, समाधि और धर्म-विनिश्चय से युक्त हो विद्या और आचरण से संपन्न और स्मृतिमान बन इस महान दुःख(-समूह) का अंत कर सकोगे।

१४५. उदकज्झि नयन्ति नेत्तिका, उसुकारा नमयन्ति तेजनं ।  
दारुं नमयन्ति तच्छका, अत्तानं दमयन्ति सुब्बता ॥

पानी ले जाने वाले (जिधर चाहते हैं उधर ही) पानी को ले जाते हैं, बाण बनाने वाले बाण को (तपा कर) सीधा करते हैं, बड़ई लकड़ी को (अपनी रुचि के अनुसार) सीधा या बांका करते हैं, और सदाचार-परायण अपना (ही) दमन करते हैं।

दण्डवग्गो दसमो निट्ठितो ।

## ११. जरावग्गो

१४६. को नु हासो किमानन्दो, निच्चं पज्जलिते सति ।  
अन्धकारेण ओनद्धा, पदीपं न गवेसथ ॥

जहां प्रतिक्षण (सब कुछ) जल ही रहा हो, वहां कैसी हँसी? कैसा आनंद? (कैसा आमोद? कैसा प्रमोद?) ऐ (अविद्यारूपी) अंधकार से घिरे हुए (भोले लोगो!) तुम (ज्ञानरूपी) प्रकाश-प्रदीप की खोज क्यों नहीं करते?

१४७. पस्स चित्तकतं बिम्बं, अरुकायं समुस्सितं ।  
आतुरं बहुसङ्कप्पं, यस्स नत्थि धुवं ठिति ॥

देखो (इस) चित्रित शरीर को जो व्रणों से युक्त, फूला हुआ, रोगी और नाना (प्रकार के) संकल्पों से युक्त है (और) जो सदा बना रहने वाला नहीं है।

१४८. परिजिण्णमिदं रूपं, रोगनीळं पभङ्गुरं ।  
भिज्जति पूतिसन्देहो, मरणन्तज्झि जीवितं ॥

यह शरीर जीर्ण-शीर्ण, रोग का घर और नितांत भंगुर है। सड़ायंध से भरी हुई (यह) देह टुकड़े-टुकड़े हो जाती है; जीवन मरणांतक जो ठहरा!

१४९. यानिमानि अपत्थानि, अलाबूनेव सारदे ।  
कापोतकानि अट्टीनि, तानि दिस्वान का रति ॥

शरद काल की फेंकी गयी (अपथ्य) लौकी के समान (कुम्हलाये हुए मृत शरीर को देख कर) या कबूतरों के से वर्ण वाली (श्मशान में पड़ी) हड्डियों को देख कर किसको (इस देह से) अनुराग होगा?

१५०. अट्टीनं नगरं कतं, मंसलोहितलेपनं ।  
यत्थ जरा च मच्चु च, मानो मक्खो च ओहितो ॥

यह हड्डियों का नगर बना है जो मांस और रक्त से लेपा गया है; जिसमें जरा, मृत्यु, अभिमान और म्रक्ष (डाह) छिपे हुए हैं।

१५१. जीरन्ति वे राजरथा सुचित्ता, अथो सरीरम्पि जरं उपेति ।  
सतञ्च धम्मो न जरं उपेति, सन्तो हवे सत्थि पवेदयन्ति ॥

रंग-विरंगे सुचित्रित राजरथ जीर्ण हो जाते हैं और यह शरीर भी जीर्णता को

प्राप्त हो जाता है। (परंतु) संतों (बुद्धों) का धर्म जीर्ण नहीं होता (तरोताजा बना रहता है)। संतजन (बुद्ध) संतों से ऐसा (ही) कहते हैं।

१५२. अप्पस्सुतायं पुरिसो, बलिबद्धोव जीरति।  
मंसानि तस्स वड्ढन्ति, पज्जा तस्स न वड्ढति ॥

अज्ञानी पुरुष बैल के समान जीर्ण होता है। उसका मांस बढ़ता है, प्रज्ञा नहीं।

१५३. अनेकजातिसंसारं, सन्धाविस्सं अनिब्बिसं।  
गहकारं गवेसन्तो, दुक्खा जाति पुनप्पुनं ॥

(इस काया-रूपी) घर को बनाने वाले की खोज में (मैं) बिना रुके अनेक जन्मों तक (भव-) संसरण करता रहा, किंतु बार बार दुःख(-मय) जन्म ही हाथ लगे।

१५४. गहकारक दिट्ठोसि, पुन गेहं न काहसि।  
सब्बा ते फासुका भग्गा, गहकूटं विसड्ढतं।  
विसङ्घारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा ॥

ऐ घर बनाने वाले! (अब) तू देख लिया गया है, (अब) फिर (तू) (नया) घर नहीं बना सकता। तेरी सारी कड़ियां टूट गयी हैं और घर का शिखर भी विशृंखलित हो गया है। चित्त पूरी तरह संस्काररहित हो गया है और तृष्णाओं का क्षय (निर्वाण) प्राप्त हो गया है।

१५५. अचरित्वा ब्रह्मचरियं, अलद्धा योव्वने धनं।  
जिण्णकोञ्चाव ज्ञायन्ति, खीणमच्छेव पल्लले ॥

ब्रह्मचर्य का पालन किये बिना (अथवा) यौवन में धन कमाये बिना (लोग वृद्धावस्था में) मत्स्यहीन जलाशय में बूढ़े (जीर्ण) क्रींच पक्षी के समान घुट-घुट कर मरते हैं।

१५६. अचरित्वा ब्रह्मचरियं, अलद्धा योव्वने धनं।  
सेन्ति चापातिखीणाव, पुराणानि अनुत्थुनं ॥

ब्रह्मचर्य का पालन किये बिना (अथवा) यौवन में धन कमाये बिना (लोग) वृद्धावस्था में धनुष से छोड़े गये (बाण) की भांति पुरानी बातों को याद कर अनुताप करते हुए बिलखते हुए सोते हैं।

जरावग्गो एकादसमो निट्ठितो ।

## १२. अत्तवग्गो

१५७. अत्तानज्जे पियं जज्जा, रक्खेय्यं नं सुरक्खितं ।  
त्तिण्णं अज्जतरं यामं, पटिजग्गेय्यं पण्डितो ॥

यदि अपने को प्रिय समझते हो तो उसको सुरक्षित रखो। समझदार (व्यक्ति) (जीवन के) तीन प्रहरों (अवस्थाओं - युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था) में से (किसी) एक में (तो) अवश्य सचेत हो।

१५८. अत्तानमेव पठमं, पतिरूपे निवेशये ।  
अथज्जमनुसासेय्यं, न किलिस्सेय्यं पण्डितो ॥

पहले अपने आपको ही उचित (कार्य) में लगाये, फिर (किसी) दूसरे को उपदेश करे, (तो) पंडित क्लेश को प्राप्त नहीं होगा।

१५९. अत्तानं चे तथा कयिरा, यथाज्जमनुसासति ।  
सुदन्तो वत दमेथ, अत्ता हि किर दुद्धमो ॥

यदि पहले अपने को वैसा बनाये जैसा कि दूसरों को उपदेश देता है, तो अपने आपको सुदान्त करने वाला (भलीभांति वश में करने वाला) ही दूसरे का दमन कर सकता है।

१६०. अत्ता हि अत्तनो नाथो, को हि नाथो परो सिया ।  
अत्तना हि सुदन्तेन, नाथं लभति दुल्लभं ॥

मनुष्य (व्यक्ति) अपना स्वामी आप है, भला दूसरा कौन स्वामी हो सकता है? अपने आपको भली-भांति वश में करके (प्रज्ञा द्वारा ही) यह दुर्लभ (स्वामित्व) प्राप्त होता है।

१६१. अत्तना हि कतं पापं, अत्तजं अत्तसम्भवं ।  
अभिमत्थति दुम्मेधं, वजिरं वस्ममयं मणिं ॥

अपने से पैदा हुआ, अपने से उत्पन्न, अपने द्वारा किया गया पाप(-कर्म) (इसे करने वाले) दुर्बुद्धि को उसी प्रकार पीड़ित करता है जिस प्रकार कि पाषाणमय मणि को वज्र।

१६२. यस्स अच्चन्तदुस्सील्यं, मालुवा सालमिवोत्थतं ।  
करोति सो तथत्तानं, यथा नं इच्छती दिसो ॥

शाल वृक्ष पर फैली हुई मालुवा लता के समान जिसका दुराचार खूब (फैला हुआ है), वह अपने आपको वैसा ही बना लेता है जैसा कि उसके शत्रु चाहते हैं।

१६३. सुकरानि असाधूनि, अत्तनो अहितानि च।  
यं वे हितञ्च साधुञ्च, तं वे परमदुक्करं॥

बुरे और अपने लिए अहितकारी (काम) करना सहल है, (किंतु) भला और हितकारी (काम) करना बड़ा दुष्कर है।

१६४. यो सासनं अरहतं, अरियानं धम्मजीविनं।  
पटिक्कोसति दुम्भेधो, दिट्ठिं निस्साय पापिकं।  
फलानि कट्टकस्सेव, अत्तघाताय फल्लति॥

धर्म का जीवन जीने वाले, आर्य, अरहंतों के शासन (=शिक्षा) की जो दुर्बुद्धि पापपूर्ण दृष्टि के कारण निंदा करता है, वह बांस के फल (फूल) की भांति आत्म-हत्या के लिए (ही) फलता (फूलता) है।

१६५. अत्तना हि कतं पापं, अत्तना संकिलिस्सति।  
अत्तना अकतं पापं, अत्तनाव विसुज्झति।  
सुद्धी असुद्धि पच्चत्तं, नाज्जो अज्जं विसोधये॥

अपने द्वारा किया गया पाप ही अपने को मैला करता है। स्वयं पाप न करे तो आदमी आप ही विशुद्ध बना रहे। शुद्धि-अशुद्धि तो प्रत्येक मनुष्य की अपनी-अपनी ही है। (अपने-अपने ही अच्छे-बुरे कर्मों के परिणामस्वरूप है।) कोई दूसरा भला किसी दूसरे को कैसे शुद्ध कर सकता है? (कैसे मुक्त कर सकता है?)

१६६. अत्तदत्थं परत्थेन, बहुनापि न हापये।  
अत्तदत्थमभिज्जाय, सदत्थपसुतो सिया॥

परार्थ के लिए आत्मार्य को बहुत ज्यादा भी न छोड़े। आत्मार्य को जानकर सदर्थ में लगा रहे।

अत्तवग्गो द्वादसमो निट्ठितो।



## १३. लोकवग्गो

१६७. हीनं धम्मं न सेवेय्य, पमादेन न संवसे।

मिच्छादिद्विं न सेवेय्य, न सिया लोकवद्दुनो ॥

(पांच कामगुणों वाले) निकृष्ट धर्म का सेवन न करे, न प्रमाद में लिप्त हो। मिथ्यादृष्टि को न अपनाये, और अपने आवागमन को बढ़ाने वाला न बने।

१६८. उत्तिट्ठे नप्पमज्जेय्य, धम्मं सुचरितं चरे।

धम्मचारी सुखं सेति, अस्मिं लोके परम्हि च ॥

उठे (उत्साही बने), प्रमाद न करे, सुचरित धर्म का आचरण करे। धर्मचारी इस लोक और परलोक (दोनों जगह) सुखपूर्वक विहार करता है।

१६९. धम्मं चरे सुचरितं, न नं दुच्चरितं चरे।

धम्मचारी सुखं सेति, अस्मिं लोके परम्हि च ॥

सुचरित धर्म का आचरण करे, दुराचरण से बचे। धर्मचारी इस लोक और परलोक (दोनों जगह) सुखपूर्वक विहार करता है।

१७०. यथा पुब्बुळ्ळकं पस्से, यथा पस्से मरीचिकं।

एवं लोकं अवेक्खन्तं, मच्चुराजा न पस्सति ॥

जो (इस) लोक को बुलबुले के समान और मृग-मरीचिका के समान देखे, उस (ऐसे देखने वाले) की ओर मृत्युराज (आंख उठा कर) नहीं देखता।

१७१. एथ पस्सथिमं लोकं, चित्तं राजरथूपमं।

यत्थ बाला विसीदन्ति, नत्थि सद्दो विजानतं ॥

आओ, चित्रित राजरथ के समान इस लोक को देखो जहां मूढ़ (जन) आसक्त होते हैं, ज्ञानी जन आसक्त नहीं होते।

१७२. यो च पुब्बे पमज्जित्वा, पच्छा सो नप्पमज्जति।

सोमं लोकं पभासेति, अब्भा मुत्तोव चन्दिमा ॥

जो पहले प्रमाद करके (भी) पीछे प्रमाद नहीं करता, वह मेघमुक्त चंद्रमा की भांति इस लोक को प्रकाशित करता है।

१७३. यस्स पापं कतं कम्मं, कुसलेन पिधीयति।

सोमं लोकं पभासेति, अब्भा मुत्तोव चन्दिमा ॥

जो अपने पहले किये हुए पाप कर्म को (वर्तमान के) कुशल कर्म से ढँक लेता है, वह मेघमुक्त चंद्रमा की भांति इस लोक को खूब भासमान करता है।

१७४. अन्धभूतो अयं लोको, तनुकेत्थ विपस्सति।

सकुणो जालमुत्तोव, अप्पो सग्गाय गच्छति॥

यह लोक (प्रज्ञा चक्षु के अभाव में) अंधे जैसा है, यहां विपश्यना करने वाले थोड़े ही हैं। जाल से मुक्त हुए पक्षी की भांति विरले ही सुगति अथवा निर्वाण को जाते हैं। (बाकी तो जाल में ही फँसे रहते हैं।)

१७५. हंसादिच्चपथे यन्ति, आकासे यन्ति इद्धिया।

नीयन्ति धीरा लोकम्हा, जेत्वा मारं सवाहिनिं॥

हंस सूर्य-पथ (आकाश) में जाते हैं, (कोई) ऋद्धि-बल से आकाश में जाते हैं। पंडित लोग सेनासहित मार को जीत कर (इस) लोक से (निर्वाण को) ले जाये जाते हैं (अर्थात्, निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं।)

१७६. एकं धम्मं अतीतस्स, मुसावादिस्स जन्तुनो।

वितिण्णपरलोकस्स, नत्थि पापं अकारियं॥

एक धर्म (सत्य) का अतिक्रमण कर जो झूठ बोलता है, परलोक के प्रति उदासीन ऐसे प्राणी के लिए कोई इस प्रकार का पाप नहीं रह जाता जो वह न कर सके।

१७७. न वे कदरिया देवलोकं वजन्ति, बाला हवे नप्पसंसन्ति दानं।

धीरो च दानं अनुमोदमानो, तेनेव सो होति सुखी परत्थ॥

कृपण (लोग) देवलोक में नहीं जाते हैं, मूढ़ (लोग) ही दान की प्रशंसा नहीं करते हैं। पंडित (व्यक्ति) दान का अनुमोदन करता हुआ उसी (कर्म के आधार) से परलोक में सुखी होता है।

१७८. पथब्बा एकरज्जेन, सग्गस्स गमनेन वा।

सब्बलोकाधिपच्चेन, सोतापत्तिफलं वरं॥

पृथ्वी के एकच्छत्र राज्य, अथवा स्वर्गारोहण, (अथवा) सारे लोकों के आधिपत्य से अधिक उत्तम है स्रोतापत्ति का फल।

लोकवग्गो तेरसमो निद्धितो।

## १४. बुद्धवग्गो

१७९. यस्स जितं नावजीयति, जितं यस्स नो याति कोचि लोके ।  
तं बुद्धमनन्तगोचरं, अपदं केन पदेन नेस्सथ ॥

जिसकी विजय को अविजय में नहीं पलटा जा सकता, जिसके द्वारा विजित (राग, द्वेष, मोहादि) वापस संसार में नहीं आते (पुनः नहीं बांधते), उस अपद अनंतगोचर बुद्ध को किस उपाय से मोहित (प्रलुब्ध) कर सकोगे ?

१८०. यस्स जालिनी विसत्तिका, तण्हा नत्थि कुहिञ्चि नेतवे ।  
तं बुद्धमनन्तगोचरं, अपदं केन पदेन नेस्सथ ॥

जिसकी जाल फैलाने वाली विषाक्त तृष्णा कहीं भी ले जाने में समर्थ नहीं रही, उस अनंतगोचर बुद्ध को किस उपाय से मोहित (प्रलुब्ध) कर सकोगे ?

१८१. ये ज्ञानपसुता धीरा, नेक्खम्मूपसमे रता ।  
देवापि तेसं पिहयन्ति, सम्बुद्धानं सतीमतं ॥

जो पंडित (जन) ध्यान (करने) में लगे रहते हैं, और त्याग और उपशमन में लगे रहते हैं, उन स्मृतिमान संबुद्धों की देवता भी स्पृहा करते हैं।

१८२. किच्छो मनुस्सपटिलाभो, किच्छं मच्चान जीवितं ।  
किच्छं सद्धम्मस्सवनं, किच्छो बुद्धानमुप्पादो ॥

मनुष्य (योनि) प्राप्त होना कठिन है, मनुष्यों का जीवित रहना कठिन है, सद्धर्म का श्रवण (कर पाना) कठिन है और बुद्धों का उत्पन्न होना कठिन है।

१८३. सब्बपापस्स अकरणं, कुसलस्स उपसम्पदा ।  
सचित्तपरियोदपनं, एतं बुद्धान सासनं ॥

सभी पापकर्मों (अकुशल कर्मों) को न करना, पुण्यकर्मों की संपदा संचित करना, (पांच नीवरणों से) अपने चित्त को परिशुद्ध करना (धोते रहना) - यही बुद्धों की शिक्षा है।

१८४. खन्ती परमं तपो तितिव्खा, निब्बानं परमं वदन्ति बुद्धा ।  
न हि पब्बजितो परुपघाती, न समणो होति परं विहेठयन्तो ॥

सहनशीलता और क्षमाशीलता परम तप है। बुद्ध (जन) निर्वाण को उत्तम

बतलाते हैं। दूसरे का घात करने वाला प्रव्रजित नहीं होता और दूसरे को सताने वाला श्रमण नहीं हो सकता।

१८५. अनूपवादो अनूपघातो, पातिमोक्खे च संवरो।  
मत्तञ्जुता च भत्तस्मिं, पन्तञ्च सयनासनं।  
अधिचित्ते च आयोगो, एतं बुद्धान सासनं॥

निंदा न करना, घात न करना, प्रातिमोक्ष (भिक्षु-नियमों) द्वारा अपने को सुरक्षित रखना, (अपने) आहार की मात्रा का जानकार होना, एकांत में सोना-बैठना और चित्त को एकाग्र करने के प्रयत्न में जुटना - यह (सभी) बुद्धों की शिक्षा है।

१८६. न कहापणवस्सेन, तित्ति कामेसु विज्जति।  
अप्पस्सादा दुखा कामा, इति विज्जाय पण्डितो॥

स्वर्ण मुद्राओं की वर्षा से (भी) कामभोगों की तृप्ति नहीं हो सकती। यह जान कर कि कामभोग अल्प आस्वाद वाले और दुःखद होते हैं, (कोई) पंडित -

१८७. अपि दिब्बेसु कामेसु, रतिं सो नाधिगच्छति।  
तण्हक्खयरतो होति, सम्मासम्बुद्धसावको॥

दैवी कामभोगों में भी आनंद प्राप्त नहीं करता। सम्यक संबुद्ध का श्रावक तृष्णा का क्षय करने में लगा रहता है।

१८८. बहं वे सरणं यन्ति, पब्बतानि वनानि च।  
आरामरुक्खचेत्यानि, मनुस्सा भयतज्जिता॥

मनुष्य भय के मारे पर्वतों, वनों, उद्यानों, वृक्षों, चैत्यों - आदि बहुतों की शरण में जाते हैं,

१८९. नेतं खो सरणं खेमं, नेतं सरणमुत्तमं।  
नेतं सरणमागम्म, सब्बदुक्खा पमुच्चति॥

(परंतु) यह शरण मंगलकारी नहीं है, यह शरण उत्तम नहीं है। इस शरण को पाकर सभी दुःखों से छुटकारा नहीं होता।

१९०. यो च बुद्धञ्च धम्मञ्च, सङ्गञ्च सरणं गतो।  
चत्तारि अरियसच्चानि, सम्मप्पज्जाय पस्सति॥

१९१. दुःखं दुःखसमुत्पादं, दुःखस्स च अतिक्कमं ।  
अरियं चट्ठङ्गिकं मग्गं, दुःखूपसमगामिनं ॥

१९२. एतं खो सरणं खेमं, एतं सरणमुत्तमं ।  
एतं सरणमागम्म, सब्बदुक्खा पमुच्चति ॥

जो बुद्ध, धर्म और संघ की शरण गया है, जो चार आर्य सत्यों - दुःख, दुःख की उत्पत्ति, दुःख से मुक्ति और मुक्तिगामी आर्य अष्टांगिक मार्ग - को सम्यक प्रज्ञा से देखता है, यही मंगलदायक शरण है, यही उत्तम शरण है। इसी शरण को प्राप्त कर (व्यक्ति) सभी दुःखों से मुक्त होता है।

१९३. दुल्लभो पुरिसाज्जो, न सो सब्बत्थ जायति ।  
यत्थ सो जायति धीरो, तं कुलं सुखमेधति ॥

श्रेष्ठ पुरुष का जन्म दुर्लभ होता है, वह सब जगह पैदा नहीं होता। वह (उत्तम प्रज्ञा वाला) धीर (पुरुष) जहां उत्पन्न होता है उस कुल में सुख की वृद्धि होती है।

१९४. सुखो बुद्धानमुत्पादो, सुखा सद्धम्मदेसना ।  
सुखा सद्धस्स सामग्गी, समग्गानं तपो सुखो ॥

सुखदायी है बुद्धों का उत्पन्न होना, सुखदायी है सद्धर्म का उपदेश। सुखदायी है संघ की एकता, सुखदायी है एक साथ तपना।

१९५. पूजारहे पूजयतो, बुद्धे यदि व सावके ।  
पपञ्चसमतिक्कन्ते, तिण्णसोकपरिद्वे ॥

पूजा के योग्य बुद्धों अथवा उनके श्रावकों - जो (भव-) प्रपंच का अतिक्रमण कर चुके हैं और शोक तथा भय को पार कर गये हैं -

१९६. ते तादिसे पूजयतो, निब्बुते अकुतोभये ।  
न सक्का पुञ्जं सङ्घातुं, इमेत्तमपि केनचि ॥

निर्वाणप्राप्त, निर्भय हुए - ऐसे लोगों की पूजा के पुण्य का परिमाण इतना होगा, यह नहीं कहा जा सकता।

बुद्धवग्गो चुद्दसमो निट्ठितो ।

## १५. सुखवग्गो

१९७. सुसुखं वत जीवाम, वेरिनेसु अवेरिनो।  
वेरिनेसु मनुस्सेसु, विहराम अवेरिनो ॥

वैरियों के बीच अवैरी होकर, अहो! हम बड़े सुख से जी रहे हैं। वैरी मनुष्यों के बीच हम अवैरी होकर विचरण करते हैं।

१९८. सुसुखं वत जीवाम, आतुरेसु अनातुरा।  
आतुरेसु मनुस्सेसु, विहराम अनातुरा ॥

(तृष्णा से) आतुर (-व्याकुल) लोगों के बीच, अहो! हम अनातुर (-अनाकुल) रह कर बड़े सुख से जी रहे हैं। आतुर (रोगी) मनुष्यों में हम अनातुर (नीरोग) रह कर विचरण करते हैं।

१९९. सुसुखं वत जीवाम, उस्सुकेसु अनुस्सुका।  
उस्सुकेसु मनस्सेसु, विहराम अनुस्सुका ॥

(कामभोगों के प्रति) आसक्त (लोभी) लोगों के बीच हम अनासक्त (अलोभी) होकर, अहो! हम बड़े सुख से जी रहे हैं। लोभी के बीच हम निर्लोभी होकर विचरण करते हैं।

२००. सुसुखं वत जीवाम, येसं नो नत्थि किञ्चनं।  
पीतिभक्खा भविस्साम, देवा आभस्सरा यथा ॥

जिनके पास कुछ नहीं है, अहो! (वैसे हम) कैसे बड़े सुख से जी रहे हैं। आभास्वर देवताओं के समान हम प्रीति का (ही) भोजन करने वाले होंगे।

२०१. जयं वेरं पसवति, दुक्खं सेति पराजितो।  
उपसन्तो सुखं सेति, हित्वा जयपराजयं ॥

विजय वैर को जन्म देती है, पराजित (व्यक्ति) दुःख (की नींद) सोता है। जिसके (रागद्वेषादि) शांत हो गये हैं वह (क्षीणाश्रव) जय और पराजय को छोड़ कर सुख (की नींद) सोता है।

२०२. नत्थि रागसमो अग्गि, नत्थि दोससमो कलि।  
नत्थि खन्धसमा दुक्खा, नत्थि सन्तिपरं सुखं ॥

राग के समान (कोई) आग नहीं, द्वेष के समान (कोई) दुर्भाग्य नहीं, पंचस्कंध

(रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार तथा विज्ञान) के समान (कोई) दुःख नहीं, शांति (निर्वाण) से बढ़ कर (कोई) सुख नहीं।

२०३. जिघच्छापरमा रोगा, सङ्घारपरमा दुखा।  
एतं जत्वा यथाभूतं, निब्बानं परमं सुखं॥

भूख (तृष्णा) सबसे बड़ा रोग है। भूख संस्कार सबसे बड़ा दुःख। (तृष्णा और उससे बनते संस्कारों को अपने भीतर विपश्यना साधना द्वारा) यथाभूत जानकर जो निर्वाण (प्राप्त होता) है, वह सबसे बड़ा सुख है।

२०४. आरोग्यपरमा लाभा, सन्तुष्टिपरमं धनं।  
विस्सासपरमा जाति, निब्बानं परमं सुखं॥

आरोग्य परम लाभ है, संतुष्टि परम धन है, विश्वास परम बंधु है, निर्वाण परम सुख है।

२०५. पविवेकरसं पित्वा, रसं उपसमस्स च।  
निद्वरो होति निष्पापो, धम्मपीतिरसं पिवं॥

पूर्ण एकांत का रस-पान कर और (ऐसे ही) शांति (निर्वाण) का रस-पान कर व्यक्ति निडर होता है और धर्म-प्रीति का रस-पान कर वह निष्पाप हो जाता है।

२०६. साहु दस्सनमरियानं, सन्निवासो सदा सुखो।  
अदस्सनेन बालानं, निच्चमेव सुखी सिया॥

आर्यो (श्रेष्ठ पुरुषों) का दर्शन अच्छा होता है, संतों के साथ निवास सदा सुखकर होता है। मूढ़ (पुरुषों) के अदर्शन से सदा सुखी बने रहो।

२०७. बालसङ्गतचारी हि, दीघमद्धान सोचति।  
दुक्खो बालेहि संवासो, अमित्तेनेव सब्बदा।  
धीरो च सुखसंवासो, जातीनं व समागमो॥

मूढ़ (पुरुषों) के साथ संगत करने वाला दीर्घ काल तक शोकग्रस्त रहता है, मूढ़ों का सहवास शत्रु के समान सदा दुःखदायी होता है, बंधुओं के समागम की भांति ज्ञानियों का सहवास सुखदायी होता है।

२०८. तस्माहि धीरञ्च पञ्जञ्च बहुस्सुतञ्च, धोरय्हसीलं वतवन्तमरियं।  
तं तादिसं सप्पुरिसं सुमेधं, भजेथ नक्खत्तपथं व चन्दिमा॥

इसलिए धीर, प्रज्ञावान, बहुश्रुत, उद्योगी, व्रती, आर्य - ऐसे सुमेध सत्पुरुष का (एवंविध) साहचर्य करे जैसे चंद्रमा नक्षत्र-पथ का करता है।

सुखवग्गो पन्नरसमो निद्धितो।



## १६. पियवग्गो

२०९. अयोगे युज्जमत्तानं, योगस्मिञ्च अयोजयं।

अत्थं हित्वा पियग्गाही, पिहेतत्तानुयोगिनं ॥

अनुचित कर्म (अयोनिसोमनसिकार) में लगा हुआ, उचित कर्म (योनिसोमनसिकार) में न लगने वाला और सदर्थ को छोड़ कर (पांच कामगुणरूपी) प्रिय को पकड़ने वाला (उस पुरुष की) स्पृहा करे जो आत्मोन्नति में लगा हो।

२१०. मा पियेहि समागच्छि, अप्पियेहि कुदाचनं।

पियानं अदस्सनं दुक्खं, अप्पियानञ्च दस्सनं ॥

प्रियों (सत्त्वों अथवा संस्कारों) का संग न करे और न कभी अप्रियों का ही। प्रियों का अदर्शन (न दिखना) दुःखदायी होता है और अप्रियों का दर्शन (अर्थात्, दिख जाना) भी दुःखदायी होता है।

२११. तस्मा पियं न कयिराथ, पियापायो हि पापको।

गन्था तेसं न विज्जन्ति, येसं नत्थि पियाप्पियं ॥

इसलिए (किसी को) प्रिय न बनाये, क्योंकि प्रिय का वियोग बुरा लगता है। जिनके (कोई) प्रिय-अप्रिय नहीं होते, उनके कोई बंधन नहीं होते।

२१२. पियतो जायती सोको, पियतो जायती भयं।

पियतो विप्पमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं ॥

प्रिय (वस्तु) से शोक उत्पन्न होता है, प्रिय से भय उत्पन्न होता है। प्रिय (के बंधन) से विमुक्त (व्यक्ति) को शोक नहीं होता, फिर भय कहां से (होगा)?

२१३. पेमतो जायती सोको, पेमतो जायती भयं।

पेमतो विप्पमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं ॥

प्रेम (करने) से शोक उत्पन्न होता है, प्रेम से भय उत्पन्न होता है। प्रेम (के बंधन) से विमुक्त (व्यक्ति) को शोक नहीं होता, फिर भय कहां से (होगा)?

२१४. रतिया जायती सोको, रतिया जायती भयं।

रतिया विप्पमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं ॥

(पंचकामगुणात्मक) राग (करने) से शोक उत्पन्न होता है, राग से भय उत्पन्न

होता है। राग (के बंधन) से विमुक्त (व्यक्ति) को शोक नहीं होता, फिर भय कहां से (होगा)?

२१५. कामतो जायती सोको, कामतो जायती भयं।  
कामतो विष्णुमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं॥

काम (कामना) से शोक उत्पन्न होता है, काम से भय उत्पन्न होता है। काम से विमुक्त (व्यक्ति) को शोक नहीं होता। फिर भय कहां से (होगा)?

२१६. तण्हाय जायती सोको, तण्हाय जायती भयं।  
तण्हाय विष्णुमुत्तस्स, नत्थि सोको कुतो भयं॥

(छः द्वारों पर होनेवाली) तृष्णा से शोक उत्पन्न होता है, तृष्णा से भय उत्पन्न होता है। तृष्णा से विमुक्त (व्यक्ति) को शोक नहीं होता, फिर भय कहां से (होगा)?

२१७. सीलदस्सनसम्पन्नं, धम्मदुं सच्चवेदिनं।  
अत्तनो कम्म कुब्बानं, तं जनो कुरुते पियं॥

जो शीलसंपन्न, सम्यक दृष्टिसंपन्न, धर्मनिष्ठ (नव प्रकार के लोकोत्तर धर्मों में स्थित), सत्यवादी, कर्तव्यपरायण है, उसे लोग प्यार करते हैं।

२१८. छन्दजातो अनक्खाते, मनसा च फुटो सिया।  
कामेसु च अप्पटिबद्धचित्तो, उद्धंसोतोति वुच्चति॥

जो अनाख्यात (अवर्णनीय, निर्वाण) का अभिलाषी हो, उसी में जिसका मन लगा हो, और (अनागामी मार्ग में होने से) कामभोगों में जिसका चित्त न रुंधा हो, वह ऊर्ध्वस्रोत कहा जाता है।

२१९. चिरप्पवासिं पुरिसं, दूरतो सोत्थिमागतं।  
जातिमित्ता सुहज्जा च, अभिनन्दन्ति आगतं॥

(जैसे) चिरकाल तक परदेस में रहने के बाद दूर (देश) से सकुशल घर आये पुरुष का संबंधी, मित्र और हितैषीजन स्वागत करते हैं;

२२०. तथेव कतपुञ्जप्पि, अस्मा लोका परं गतं।  
पुञ्जानि पटिगण्हन्ति, पियं जातीव आगतं॥

वैसे ही पुण्यकर्मा (पुरुष) के इस लोक से पर (-लोक) में जाने पर (उसके)

पुण्य उसका वैसे ही स्वागत करते हैं जैसे (अपने) प्रिय के लौटने पर उसके संबंधी (उसका स्वागत करते हैं)।

पियवग्गो सोळसमो निट्ठितो।

२२१. क्रोधं जहे विष्णुजहेय्य मानं, संयोजनं सब्बमतिक्कमेय्य ।  
तं नामरूपस्मिमसज्जमानं, अकिञ्चनं नानुपतन्ति दुक्खा ॥

क्रोध को छोड़ दे, अभिमान का त्याग करे, सारे संयोजनों (बंधनों) को पार कर जाय। ऐसे नामरूप में आसक्त न होने वाले अपरिग्रही को दुःख संतप्त नहीं करते।

२२२. यो वे उप्पतितं क्रोधं, रथं भन्तं व वारये ।  
तमहं सारथिं ब्रूमि, रस्मिग्गाहो इतरो जने ॥

जो भड़के हुए क्रोध को (बड़े वेग से) घूमते हुए रथ के समान रोक ले, उसे मैं सारथि कहता हूँ, दूसरे लोग तो (मात्र) लगाम पकड़ने वाले होते हैं।

२२३. अक्कोधेन जिने क्रोधं, असाधुं साधुना जिने ।  
जिने कदरियं दानेन, सच्चेनालिकवादिनं ॥

अक्रोध से क्रोध को जीते, अभद्र को भद्र बन कर जीते, कृपण को दान से जीते और झूठ बोलने वाले को सत्य से (जीते)।

२२४. सच्चं भणे न कुञ्जेय्य, दज्जा अप्पम्पि याचितो ।  
एतेहि तीहि ठानेहि, गच्छे देवान सन्तिके ॥

सच बोले, क्रोध न करे, मांगने पर थोड़ा रहते भी दे। इन तीन कारणों से (कोई व्यक्ति) देवताओं के निकट (अर्थात्, देवलोक में) चला जाता है।

२२५. अहिंसका ये मुनयो, निच्चं कायेन संवुता ।  
ते यन्ति अच्चुतं ठानं, यत्थ गन्त्वा न सोचरे ॥

जो मुनि (जन) अहिंसक हैं और जो सदा काया में संयत रहते हैं, वे उस अच्युत (शाश्वत) स्थान (निर्वाण) को पा लेते हैं जहां पहुँच कर शोक नहीं करते।

२२६. सदा जागरमानानं, अहोरत्तानुसिक्खिनं ।  
निब्बानं अधिमुत्तानं, अत्थं गच्छन्ति आसवा ॥

जो सदा जागरूक रहते हैं, रात-दिन सीखने में लगे रहते हैं और जिनका ध्येय निर्वाण प्राप्त करना है, उनके आश्रव नष्ट हो जाते हैं।

२२७. पौराणमेतं अतुल, नेतं अज्जतनामिव।  
निन्दन्ति तुण्हिमासीनं, निन्दन्ति बहुभाणिनं।  
मितभाणिमि निन्दन्ति, नत्थि लोके अनिन्दितो ॥

हे अतुल! यह पुरानी बात है, आज की नहीं - (लोग) चुप बैठे हुए की निंदा करते हैं, बहुत बोलने वाले की निंदा करते हैं, मितभाषी की भी निंदा करते हैं। संसार में अनिंदित कोई नहीं है।

२२८. न चाहु न च भविस्सति, न चेतरहि विज्जति।  
एकन्तं निन्दितो पोसो, एकन्तं वा पसंसितो ॥

ऐसा पुरुष जिसकी निंदा ही निंदा होती हो, या प्रशंसा ही प्रशंसा, न (कभी) था, न होगा, न इस समय है।

२२९. यं चे विज्जू पसंसन्ति, अनुविच्च सुवे सुवे।  
अच्छिह्ववुत्तिं मेधाविं, पज्जासीलसमाहितं ॥

विज्ञ (लोग) सोच विचार कर जिस प्रज्ञा वा शील से युक्त, निर्दोष, मेधावी की दिन-प्रतिदिन प्रशंसा करते हैं -

२३०. निक्खं जम्बोनदस्सेव, को तं निन्दितुमरहति।  
देवापि नं पसंसन्ति, ब्रह्मणापि पसंसितो ॥

जम्बोनद सोने की अशर्फी के समान उसकी कौन निंदा कर सकता है? देवता भी उसकी प्रशंसा करते हैं, वह ब्रह्मा द्वारा भी प्रशंसित होता है।

२३१. कायप्पकोपं रक्खेय्य, कायेन संवुतो सिया।  
कायदुच्चरितं हित्वा, कायेन सुचरितं चरे ॥

कायिक चंचलता से बचा रहे, काय से संयत रहे। कायिक दुराचार को त्याग कर शरीर से सदाचरण करे।

२३२. वचीपकोपं रक्खेय्य, वाचाय संवुतो सिया।  
वचीदुच्चरितं हित्वा, वाचाय सुचरितं चरे ॥

वाचिक चंचलता से बचा रहे, वाणी से संयत रहे। वाचिक दुराचार को त्याग कर वाणी का सदाचरण करे।

२३३. मनोपकोपं रक्खेय्य, मनसा संवुतो सिया।  
मनोदुच्चरितं हित्वा, मनसा सुचरितं चरे ॥

मानसिक चंचलता से बचे, मन से संयत रहे (उसे संयमित रखे)। मानसिक दुराचार को त्याग कर मानसिक सदाचरण करे।

**२३४. कायेन संवुता धीरा, अथो वाचाय संवुता।**

**मनसा संवुता धीरा, ते वे सुपरिसंवुता॥**

जो धीर पुरुष काय से संयत हैं, वाणी से संयत हैं, मन से संयत हैं, वे ही पूर्णतया संयत हैं।

कोधवग्गो सत्तरसमो निट्ठितो।

२३५. पण्डुपलासोव दानिसि, यमपुरिसापि च ते उपट्ठिता ।  
उय्योगमुखे च तिट्ठसि, पाथेय्यम्पि च ते न विज्जति ॥

(अरे उपासक!) पीले पत्ते के समान इस समय तू है, यमदूत तेरे पास खड़े हैं (अर्थात्, अब तू मरणासन्न है), तू प्रयाण के लिए तैयार है और (कुशल कर्मों का) पाथेय (रास्ते की खुराक) तेरे पास कुछ नहीं है।

२३६. सो करोहि दीपमत्तनो, खिप्पं वायम पण्डितो भव ।  
निद्धन्तमलो अनङ्गणो, दिब्बं अरियभूमिं उपेहिसि ॥

सो तू अपने लिए द्वीप (रक्षास्थल) बना, शीघ्र ही (साधना का) अभ्यास कर पंडित हो जा। (तू) मल का प्रक्षालन कर, निर्मल बन, दिव्य आर्यभूमि (पांच प्रकार की शुद्धावास भूमि) को पा लेगा।

२३७. उपनीतवयो च दानिसि, सम्पयातोसि यमस्स सन्तिके ।  
वासो ते नत्थि अन्तरा, पाथेय्यम्पि च ते न विज्जति ॥

अब तेरी आयु समाप्त हो चुकी है, तू यम के निकट पहुँच गया है, बीच में तेरा कोई ठिकाना भी नहीं है और न ही तेरे पास (कोई) पाथेय (रास्ते की खुराक) है।

२३८. सो करोहि दीपमत्तनो, खिप्पं वायम पण्डितो भव ।  
निद्धन्तमलो अनङ्गणो, न पुनं जातिजरं उपेहिसि ॥

सो तू अपने लिए द्वीप बना, शीघ्र ही (साधना का) अभ्यास कर पंडित हो जा। (तू) मल का प्रक्षालन कर, निर्मल बन, पुनः जन्म, जरा (रोग तथा मृत्यु) के बंधन में नहीं पड़ेगा।

२३९. अनुपुब्बेन मेधावी, थोकं थोकं खणे खणे ।  
कम्मरो रजतस्सेव, निद्धमे मलमत्तनो ॥

समझदार व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने मैल को क्रमशः थोड़ा-थोड़ा क्षण-प्रतिक्षण वैसे ही दूर करे जैसे कि रजतकार (सुनार) चांदी के मैल को दूर करता है।

२४०. अयसाव मलं समुट्ठितं, तदुट्ठाय तमेव खादति ।  
एवं अतिधोनचारिनं, सानि कम्मनि नयन्ति दुग्गतिं ॥

जैसे लोहे के ऊपर उठा हुआ मल (जंग) उसी पर उठ कर उसी को खाता है, वैसे ही मर्यादा का उल्लंघन करने वाले (व्यक्ति) के अपने (ही) कर्म (उसे) दुर्गति की ओर ले जाते हैं।

२४१. असज्जायमला मन्ता, अनुद्वानमला घरा।  
मलं वण्णस्स कोसज्जं, पमादो रक्खतो मलं ॥

स्वाध्याय न करना परियत्ति का मल है, मरम्मत न करना (झाड़ू-बुहारू न करना) घरों का मल है, आलस्य सौंदर्य का मल है और प्रमाद प्रहरी का मल है।

२४२. मलित्थिया दुच्चरितं, मच्छेरं ददतो मलं।  
मला वे पापका धम्मा, अस्मि लोके परम्हि च ॥

दुश्चरित्र होना स्त्री का मल है, कृपणता दाता का मल है और (सभी) पापपूर्ण (अकुशल) धर्म इहलोक और परलोक के मल हैं।

२४३. ततो मला मलतरं, अविज्जा परमं मलं।  
एतं मलं पहन्त्वान, निम्मला होथ भिक्खवो ॥

उससे भी बढ़ कर अविद्या (आठ प्रकार का अज्ञान) परम मल है। हे साधको! इस मल को दूर करके निर्मल बन जाओ।

२४४. सुजीवं अहिरिकेन, काकसूरेन धंसिना।  
पक्खन्दिना पगब्भेन, संकिलिट्ठेन जीवितं ॥

(पापाचार के प्रति) निर्लज्ज, कौवे के समान (छीनने में) शूर, (परहित-विनाशी, आत्मश्लाघी (शेखीखोर) (बड़बोल), दुःसाहसी, मलिन (पुरुष) का जीवन सुखपूर्वक बीतता हुआ (देखा जाता है)।

२४५. हिरीमता च दुज्जीवं, निच्चं सुचिगवेसिना।  
अलीनेनाप्पगब्भेन, सुद्धाजीवेन पस्सता ॥

(पापाचार के प्रति) लज्जालु, नित्य पवित्रता का ध्यान रखने वाले, अप्रमादी, अनुच्छृंखल, शुद्ध जीविका वाले (पुरुष) के जीवन को कठिनाई से बीतते (देखा जाता है)।

२४६. यो पाणमतिपातेति, मुसावादच्च भासति।  
लोके अदिन्नमादियति, परदारच्च गच्छति ॥



२४७. सुरामेरयपानञ्च, यो नरो अनुयुञ्जति।  
इधेवमेसो लोकस्मिं, मूलं खणति अत्तनो॥

जो संसार में हिंसा करता है, झूठ बोलता है, चोरी करता है, परस्त्रीगमन करता है, मद्यपान (सुरा एवं मेरय का पान) करता है, वह व्यक्ति यहीं - इसी लोक में - अपनी जड़ खोदता है।

२४८. एवं भो पुरिस जानाहि, पापधम्मा असञ्जता।  
मा तं लोभो अधम्मो च, चिरं दुक्खाय रन्धयुं॥

हे पुरुष! ऐसा जान कि अकुशल धर्म पर संयम करना आसान नहीं है। तुझे लोभ (राग) तथा अधर्म (पाप, अकुशल धर्म) चिरकाल तक दुःख में न रांधते (पकाते) रहें।

२४९. ददाति वे यथासद्धं, यथापसादनं जनो।  
तत्थ यो मङ्कु भवति, परेसं पानभोजने।  
न सो दिवा वा रत्तिं वा, समाधिमधिगच्छति॥

लोग अपनी श्रद्धा और प्रसन्नता के अनुरूप दान देते हैं। दूसरों के खाने-पीने से जो खिन्न होता है वह दिन हो या रात (कभी भी) (उपचार अथवा अर्पणा) समाधि को प्राप्त नहीं करता है।

२५०. यस्स चेतं समुच्छिन्नं, मूलघच्चं समूहतं।  
स वे दिवा वा रत्तिं वा, समाधिमधिगच्छति॥

(किंतु) जिसकी ऐसी मनोवृत्ति उच्छिन्न हो गयी है (समूल नष्ट हो गयी है) वही, दिन हो या रात (सदैव), एकाग्रता को प्राप्त होता है।

२५१. नत्थि रागसमो अग्नि, नत्थि दोससमो गहो।  
नत्थि मोहसमं जालं, नत्थि तण्हासमा नदी॥

राग के समान अग्नि नहीं है, न द्वेष के समान जकड़न। मोह के समान फंदा नहीं है, न तृष्णा के समान नदी।

२५२. सुदस्सं वज्जमज्जेसं, अत्तनो पन दुद्वसं।  
परेसं हि सो वज्जानि, ओपुनाति यथा भुसं।  
अत्तनो पन छादेति, कलिव कित्त्वा सठो॥

दूसरों का दोष देखना आसान है, किंतु अपना (दोष) देखना कठिन। वह

(व्यक्ति) दूसरों के दोषों को भूसे की तरह उड़ाता फिरता है, किंतु अपने दोषों को वैसे ही ढँकता है जैसे बेईमान जुआरी पासे को।

२५३. परवज्जानुपस्सिस्स, निच्चं उज्झानसज्जिनो।

आसवा तस्स वड्ढन्ति, आरा सो आसवक्खया ॥

दूसरों के दोषों को देखने में लगे हुए, सदा शिकायत करने की चेतना वाले (व्यक्ति) के आश्रव (चित्त-मल) बढ़ते हैं। वह आश्रवों के क्षय से दूर होता है।

२५४. आकासेव पदं नत्थि, समणो नत्थि बाहिरे।

पपञ्चाभिरता पजा, निप्पपञ्चा तथागता ॥

आकाश में कोई पद (चिह्न) नहीं होता, (बुद्ध-शासन से) बाहर (कोई) श्रमण नहीं होता। लोग भांति-भांति के प्रपंचों में पड़े रहते हैं, (किंतु) तथागत निष्प्रपंच होते हैं।

२५५. आकासेव पदं नत्थि, समणो नत्थि बाहिरे।

सङ्घारा सस्सता नत्थि, नत्थि बुद्धानमिज्जितं ॥

आकाश में (कोई) पद (चिह्न) नहीं होता, (बुद्ध-शासन से) बाहर (मुक्ति के मार्ग पर चलता हुआ या मुक्ति का फल-प्राप्त) (कोई) श्रमण नहीं होता, संस्कार (पांच स्कंध) शाश्वत नहीं होते, बुद्धों में (किसी प्रकार की) चंचलता नहीं होती।

मलवग्गो अट्टारसमो निट्ठितो।

२५६. न तेन होति धम्मट्टो, येनत्थं साहसा नये।  
यो च अत्थं अनत्थञ्च, उभो निच्छेय्य पण्डितो ॥

जो (व्यक्ति) सहसा किसी बात का निश्चय कर ले, वह धर्मिष्ठ नहीं कहा जाता। जो अर्थ और अनर्थ दोनों का चिंतन कर निश्चय करे वह पंडित (कहलाता है)।

२५७. असाहसेन धम्मेन, समेन नयती परे।  
धम्मस्स गुत्तो मेधावी, “धम्मट्टो”ति पवुच्चति ॥

जो (व्यक्ति) धीरज के साथ, धर्मपूर्वक, निष्पक्ष होकर दूसरों का मार्गदर्शन करता है, वह धर्मरक्षक मेधावी ‘धर्मिष्ठ’ कहा जाता है।

२५८. न तेन पण्डितो होति, यावता बहु भासति।  
खेमी अवेरी अभयो, “पण्डितो”ति पवुच्चति ॥

(संघ के बीच) बहुत बोलने से (कोई) पंडित नहीं हो जाता। (कुशल-) क्षेम से रहने वाला, वैर-रहित तथा निर्भय (व्यक्ति) ही ‘पंडित’ कहा जाता है।

२५९. न तावता धम्मधरो, यावता बहु भासति।  
यो च अप्पम्पि सुत्वान, धम्मं कायेन पस्सति।  
स वे धम्मधरो होति, यो धम्मं नप्पमज्जति ॥

बहुत बोलने से (कोई) धर्मधर नहीं हो जाता। जो (कोई) थोड़ी सी भी (धर्म की बात) सुन कर काय से धर्म का दर्शन करने लगता है (अर्थात्, विपश्यना करने लगता है) और जो धर्म (के आचरण) में प्रमाद नहीं करता, वही निःसंदेह ‘धर्मधर’ होता है।

२६०. न तेन थेरो सो होति, येनस्स पलितं सिरो।  
परिपक्को वयो तस्स, “मोघजिण्णो”ति वुच्चति ॥

सिर के (बाल) पकने से (कोई) स्थविर नहीं हो जाता, (केवल) उसकी आयु पकी है, वह तो ‘मोघजीर्ण’ (व्यर्थ का वृद्ध हुआ) कहा जाता है।

२६१. यम्हि सच्चञ्च धम्मो च, अहिंसा संयमो दमो।  
स वे वन्तमलो धीरो, “थेरो” इति पवुच्चति ॥

जिसमें सत्य, धर्म, अहिंसा, संयम और दम है, वही विगतमल, धृतिसंपन्न स्थविर कहा जाता है।

२६२. न वाक्करणमत्तेन, वण्णपोक्खरताय वा।  
साधुरूपो नरो होति, इस्सुकी मच्छरी सठो॥

जो ईर्ष्यालु, मत्सरी और शठ है, वह वक्तामात्र होने से अथवा सुंदर-रूप होने से 'साधुरूप' मनुष्य नहीं हो जाता।

२६३. यस्स चेतं समुच्छिन्नं, मूलघच्चं समूहतं।  
स वन्तदोसो मेधावी, "साधुरूपो"ति वुच्चति॥

जिसके (भीतर से) ये (ईर्ष्या, मात्सर्य आदि) जड़मूल से सर्वथा उच्छिन्न हो गये हैं, वह विगतदोष मेधावी (पुरुष) 'साधुरूप' कहा जाता है।

२६४. न मुण्डकेन समणो, अब्बतो अलिकं भणं।  
इच्छालोभसमापन्नो, समणो किं भविस्सति॥

जो (शीलव्रत और धृतांगव्रत पालन न करने से) अव्रती है (और) जो झूठ बोलने वाला है, वह सिर मुँड़ा लेने (मात्र) से श्रमण नहीं हो जाता। इच्छा और लोभ से ग्रस्त भला क्या श्रमण होगा?

२६५. यो च समेति पापानि, अणुं थूलानि सब्बसो।  
समित्ता हि पापानं, "समणो"ति पवुच्चति॥

जो छोटे-बड़े पापों का सर्वशः शमन कर लेता है, पापों के शमित होने के कारण वह 'श्रमण' कहा जाता है।

२६६. न तेन भिक्खु सो होति, यावता भिक्खते परे।  
विस्सं धम्मं समादाय, भिक्खु होति न तावता॥

दूसरों से भिक्षा मांगने (मात्र) से (कोई) भिक्षु नहीं हो जाता, और न ही भिक्षु होता है विषम धर्म को ग्रहण करने से।

२६७. योध पुञ्जच्च पापच्च, बाहेत्वा ब्रह्मचरियवा।  
सङ्घाय लोके चरति, स वे "भिक्खू"ति वुच्चति॥

जो यहां (इस शासन में) पुण्य और पाप को दूर रखकर, ब्रह्मचारी बन, विचार करके लोक में विचरण करता है, वही वस्तुतः 'भिक्षु' कहा जाता है।

२६८. न मोनेन मुनी होति, मूळरूपो अविदसु।

यो च तुलं व पग्गह, वरमादाय पण्डितो ॥

अविद्वान और मूढ़-समान (पुरुष) (केवल) मौन रहने से मुनि नहीं हो जाता। जो पंडित तराजू के समान तोल कर (शील, समाधि, प्रज्ञा, विमुक्ति, विमुक्तिज्ञानदर्शन-रूपी) उत्तम (तत्त्व) को ग्रहण कर -

२६९. पापानि परिवज्जेति, स मुनी तेन सो मुनि।

यो मुनाति उभो लोके, “मुनि” तेन पवुच्चति ॥

पाप(-कर्मों) का परित्याग कर देता है, वह मुनि होता है - इस बात से वह मुनि होता है। चूंकि वह दोनों लोकों का मनन करता है, इस कारण वह ‘मुनि’ कहा जाता है।

२७०. न तेन अरियो होति, येन पाणानि हिंसति।

अहिंसा सब्बपाणानं, “अरियो”ति पवुच्चति ॥

प्राणियों की हिंसा करने से (कोई) आर्य नहीं हो जाता। सभी प्राणियों की हिंसा न करने से वह ‘आर्य’ कहा जाता है।

२७१. न सीलब्बतमत्तेन, बाहुसच्चेन वा पन।

अथ वा समाधिलाभेन, विवित्तसयनेन वा ॥

केवल शील (पालने) और व्रत (करने) से, या बहुश्रुत होने से, या समाधि के लाभ से, या एकांत में शयन करने (एकांतवासी होने) से -

२७२. फुसामि नेक्खम्मसुखं, अपुथुज्जनसेवितं।

भिव्खु विस्सासमापादि, अप्पत्तो आसवक्खयं ॥

‘पृथग्जन (अज्ञ) जिसे सेवन नहीं कर सकते (मैंने) उस नैष्कर्म्य-सुख को प्राप्त कर लिया है’ ऐसा सोच हे भिक्षुओ! आश्रवों का क्षय न हो जाने तक (तुम) आश्वस्त होकर (अर्थात्, चैन से) मत (बैठे) रहो।

धम्मद्वग्गो एकूनवीसतिमो निट्ठितो।

२७३. मगानट्टङ्गिको सेट्ठो, सच्चानं चतुरो पदा।

विरागो सेट्ठो धम्मानं, द्विपदानञ्च चक्खुमा ॥

मार्गों में अष्टांगिक मार्ग श्रेष्ठ है, सच्चाइयों में चार आर्य-सत्य, धर्मों में वीतरागता श्रेष्ठ है, (देवमनुष्यादि) द्विपदों में चक्षुमान बुद्ध।

२७४. एसेव मगो नत्थञ्जो, दस्सनस्स विसुद्धिया।

एतज्जि तुम्हे पटिपज्जथ, मारस्सेतं पमोहनं ॥

दर्शन की विशुद्धि (ज्ञान की प्राप्ति) के लिए यही मार्ग है, (कोई) दूसरा नहीं। तुम इसी पर आरूढ़ होओ, यह मार को हक्का-बक्का करने वाला, किंकर्तव्यविमूढ़ बनाने वाला है।

२७५. एतज्जि तुम्हे पटिपन्ना, दुक्खस्सन्तं करिस्सथ।

अक्खातो वो मया मगो, अज्जाय सल्लकन्तनं ॥

इस (मार्ग) पर आरूढ़ होकर तुम दुःख का अंत कर लोगे। मेरे द्वारा शल्य काटने वाले इस मार्ग को स्वयं जान कर तुम्हारे लिए आख्यान किया गया है।

२७६. तुम्हेहि किच्चमातप्पं, अक्खातारो तथागता।

पटिपन्ना पमोक्खन्ति, ज्ञायिनो मारबन्धना ॥

तपना तो तुम्हें ही पड़ेगा, तथागत तो (मार्ग) आख्यात करते हैं। इस (मार्ग) पर आरूढ़ होकर ध्यान करने वाले मार के बंधन से सर्वथा मुक्त हो जाते हैं।

२७७. “सब्बे सङ्गारा अनिच्चा”ति, यदा पज्जाय पस्सति।

अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मगो विसुद्धिया ॥

“सारे संस्कार अनित्य हैं” (याने, जो कुछ उत्पन्न होता है वह नष्ट होता ही है)। इस (सच्चाई) को जब कोई (विपश्यना-) प्रज्ञा से देख (-जान) लेता है, तब उसको दुःखों से निर्वेद प्राप्त होता है (अर्थात्, दुःख-क्षेत्र के प्रति भोक्ताभाव टूट जाता है) - ऐसा है यह विशुद्धि (विमुक्ति) का मार्ग!

२७८. “सब्बे सङ्गारा दुक्खा”ति, यदा पज्जाय पस्सति।

अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मगो विसुद्धिया ॥

“सारे संस्कार दुःख हैं” (याने, जो कुछ उत्पन्न होता है, वह नाशवान होने के

कारण दुःख ही है)। इस (सच्चाई) को जब कोई (विपश्यना-) प्रज्ञा से देख (-जान) लेता है, तब उसको सभी दुःखों से निर्वेद प्राप्त होता है (अर्थात्, दुःख-क्षेत्र के प्रति भोक्ताभाव टूट जाता है) - ऐसा है यह विशुद्धि (विमुक्ति) का मार्ग!

२७९. “सब्बे धम्मा अनत्ता”ति, यदा पज्जाय पस्सति ।

अथ निब्बिन्दति दुक्खे, एस मग्गो विसुद्धिया ॥

“सभी धर्म अनात्म हैं” (याने, लोकीय अथवा लोकोत्तर जो कुछ भी है, वह सब अनात्म है, ‘मैं’ ‘मेरा’ नहीं है)। इस (सच्चाई) को जब कोई (विपश्यना-) प्रज्ञा से देख (-जान) लेता है, तब उसको सभी दुःखों से निर्वेद प्राप्त होता है (अर्थात्, दुःख-क्षेत्र के प्रति भोक्ताभाव टूट जाता है) - ऐसा है यह विशुद्धि (विमुक्ति) का मार्ग!

२८०. उट्ठानकालम्हि अनुट्ठहानो, युवा बली आलसियं उपेतो ।

संसन्नसङ्गप्पमनो कुसीतो, पज्जाय मग्गं अलसो न विन्दति ॥

जो उद्योग करने के समय उद्योग नहीं करता, युवा और बलशाली होने पर भी आलस्य करता है, मन के संकल्पों को गिरा देता है, निर्वीर्य होता है - ऐसा आलसी (व्यक्ति) प्रज्ञा का मार्ग नहीं पा सकता ।

२८१. वाचानुरक्खी मनसा सुसंवुतो, कायेन च नाकुसलं कयिरा ।

एते तयो कम्मपथे विसोधये, आराधये मग्गमिसिप्पवेदितं ॥

वाणी को संयत रखे, मन को संयत रखे और शरीर से कोई अकुशल (काम) न करे। इन तीनों कर्मपथों (कर्मद्वियों) का विशोधन करे। ऋषि (बुद्ध) के बताये (अष्टांगिक) मार्ग का अनुसरण करे।

२८२. योगा वे जायती भूरि, अयोगा भूरिसङ्खयो ।

एतं द्वेधापथं जत्वा, भवाय विभवाय च ।

तथात्तानं निवेसेय्य, यथा भूरि पवह्वति ॥

योग (के अभ्यास) से प्रज्ञा उत्पन्न होती है, उसके अभाव से उसका क्षय होता है। उत्पत्ति और विनाश के (योग तथा अयोग - इन) दो प्रकार के मार्गों को जान कर अपने आपको इस प्रकार विनियोजित करे जिससे प्रज्ञा की भरपूर वृद्धि हो।

२८३. वनं छिन्दथ मा रुक्खं, वनतो जायते भयं ।

छेत्वा वनञ्च वनथञ्च, निब्बना होथ भिक्खवो ॥

वन (आसक्ति) को काटो, वृक्ष (शरीर) को नहीं। भय वन से पैदा होता है। हे साधको! वन को, और झाड़ (तृष्णा) को काट कर अनासक्त हो जाओ।

२८४. याव हि वनथो न छिज्जति, अणुमत्तोपि नरस्स नारिसु।  
पटिबद्धमनोव ताव सो, वच्छो खीरपकोव मातरि ॥

जब तक अणुमात्र (जरा-सी) भी नर की नारियों के प्रति कामना बनी रहती है, तब तक जैसे दूध पीने वाला बछड़ा माता में आबद्ध रहता है वैसे ही वह नर भी (उनमें) आसक्त रहता है।

२८५. उच्छिन्द सिनेहमत्तनो, कुमुदं सारदिकं व पाणिना।  
सन्तिमग्गमेव ब्रूहय, निब्बानं सुगतेन देसितं ॥

जिस प्रकार हाथ से शरद (ऋतु) के कुमुद को तोड़ा जाता है, उसी प्रकार अपने (हृदय से) स्नेह को उच्छिन्न कर डालो। सुगत (बुद्ध) द्वारा उपदिष्ट (इस) शांतिमार्ग निर्वाण को ही भावित करो।

२८६. इध वस्सं वसिस्सामि, इध हेमन्तगिम्हिसु।  
इति बालो विचिन्तेति, अन्तरायं न बुज्जति ॥

(मैं) यहां वर्षाकाल में रहूंगा, यहां हेमंत और ग्रीष्म में - मूढ़ (व्यक्ति) इस प्रकार सोचता है और (किसी संभावित) बाधा को नहीं बूझता (कि मैं किसी भी समय, देश अथवा उम्र में इस जीवन से कूच कर सकता हूं)।

२८७. तं पुत्तपसुसम्मत्तं, ब्यासत्तमनसं नरं।  
सुत्तं गामं महोघोव, मच्चु आदाय गच्छति ॥

जैसे सोये हुए गांव को (कोई) बड़ी बाढ़ बहा कर ले जाय, वैसे ही पुत्र और पशु के नशे में धुत्त आसक्तचित्त (व्यक्ति) को मृत्यु (पकड़ कर) ले जाती है।

२८८. न सन्ति पुत्ता ताणाय, न पिता नापि बन्धवा।  
अन्तकेनाधिपन्नस्स, नत्थि जातीसु ताणता ॥

पुत्र रक्षा नहीं कर सकते, न पिता और न ही बंधुजन। जब मृत्यु पकड़ लेती है तब जाति वाले रक्षा नहीं कर सकते।

२८९. एतमत्थवसं जत्वा, पण्डितो सीलसंवुतो।  
निब्बानगमनं मग्गं, खिप्पमेव विसोधये ॥



इस तथ्य को जान कर शील में संयत पंडित (समझदार व्यक्ति) निर्वाण की ओर ले जाने वाले मार्ग का शीघ्र ही विशोधन करे।

मग्गवग्गो वीसत्तिमो निट्ठितो।

२१०. मत्तासुखपरिच्चागा, पस्से चे विपुलं सुखं ।  
चजे मत्तासुखं धीरो, सम्पस्सं विपुलं सुखं ॥

यदि (कोई) धीर (व्यक्ति) थोड़े से सुख के परित्याग से विपुल (निर्वाण) सुख (का लाभ) देखे, तो (वह) विपुल सुख का ख्याल करके थोड़े से सुख को छोड़ दे।

२११. परदुक्खूपधानेन, अत्तनो सुखमिच्छति ।  
वेरसंसग्गसंसट्ठो, वेरा सो न परिमुच्चति ॥

दूसरे को दुःख देकर जो अपने लिए सुख चाहता है, वैर के संसर्ग में पड़ कर वह वैर से मुक्त नहीं हो पाता।

२१२. यज्झि किच्चं अपविद्धं, अकिच्चं पन कयिरति ।  
उन्नळानं पमत्तानं, तेसं वड्ढन्ति आसवा ॥

जो करणीय से हाथ खींच ले किंतु अकरणीय को करे, ऐसे खोखले (घमंडी) प्रमादियों के आश्रव (चित्तमल) बढ़ते हैं।

२१३. येसञ्च सुसमारद्धा, निच्चं कायगता सति ।  
अकिच्चं ते न सेवन्ति, किच्चे सातच्चकारिनो ।  
सतानं सम्पजानानं, अत्थं गच्छन्ति आसवा ॥

जिनकी कायानुस्मृति नित्य उपस्थित रहती है (याने, जो सतत कायानुपशयना करते रहते हैं, काय के प्रति एवं काय में होने वाली संवेदनाओं के प्रति जागरूक रहते हैं), वे (साधक) कभी कोई अकरणीय काम नहीं करते, सदा करणीय ही करते हैं। (ऐसे) स्मृतिमान और प्रज्ञावान (साधकों) के आश्रव क्षय को प्राप्त होते हैं (उनके चित्त के मैल नष्ट होते हैं)।

२१४. मातरं पितरं हन्त्वा, राजानो द्वे च खत्तिये ।  
रट्ठं सानुचरं हन्त्वा, अनीघो याति ब्राह्मणो ॥

माता (तृष्णा), पिता (अहंकार), दो क्षत्रिय राजाओं (शाश्वत दृष्टि और उच्छेद दृष्टि), अनुचर (राग) सहित राष्ट्र (बारह आयतन) का हनन कर ब्राह्मण (क्षीणाश्रव) दुःखरहित हो जाता है।

२९५. मातरं पितरं हत्त्वा, राजानो द्वे च सोत्थिये ।  
वेयग्घपञ्चमं हत्त्वा, अनीघो याति ब्राह्मणो ॥

माता (तृष्णा), पिता (अहंकार), दो श्रोत्रिय (ब्राह्मण) राजाओं (शाश्वत दृष्टि और उच्छेद दृष्टि) और पांच व्याघ्रों में (पांच नीवरणों में) पांचवें (संदेह) का हनन कर ब्राह्मण (क्षीणाश्रव) दुःखरहित हो जाता है।

२९६. सुप्पबुद्धं पबुज्झन्ति, सदा गोतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, निच्चं बुद्धगता सति ॥

जिनकी दिन-रात, हर समय बुद्ध-विषयक स्मृति बनी रहती है, वे गौतम (भगवान बुद्ध) के श्रावक सदैव भली-भांति प्रबुद्ध (जाग्रत) बने रहते हैं।

२९७. सुप्पबुद्धं पबुज्झन्ति, सदा गोतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, निच्चं धम्मगता सति ॥

जिनकी दिन-रात, हर समय धर्म-विषयक स्मृति बनी रहता है, वे गौतम (भगवान बुद्ध) के श्रावक सदैव भली-भांति प्रबुद्ध बने रहते हैं।

२९८. सुप्पबुद्धं पबुज्झन्ति, सदा गोतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, निच्चं सङ्गगता सति ॥

जिनकी दिन-रात, हर समय संघ-विषयक स्मृति बनी रहती है, वे गौतम (भगवान बुद्ध) के श्रावक सदैव भली-भांति प्रबुद्ध बने रहते हैं।

२९९. सुप्पबुद्धं पबुज्झन्ति, सदा गोतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, निच्चं कायगता सति ॥

जिनमें दिन-रात कायगता स्मृति (याने, काय के प्रति जागरूकता) की निरंतरता बनी रहती है, गौतम (भगवान बुद्ध) के वे श्रावक सदैव भली-भांति प्रबुद्ध बने रहते हैं।

३००. सुप्पबुद्धं पबुज्झन्ति, सदा गोतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, अहिंसाय रतो मनो ॥

जिनका मन दिन-रात अहिंसा में रमा रहता है, वे गौतम (भगवान बुद्ध) के श्रावक सदैव भली-भांति प्रबुद्ध बने रहते हैं।

३०१. सुप्पबुद्धं पबुज्झन्ति, सदा गोतमसावका ।  
येसं दिवा च रत्तो च, भावनाय रतो मनो ॥

जिनका मन दिन-रात (मैत्री) भावना में रत रहता है, वे गौतम (भगवान बुद्ध) के श्रावक सदैव भली-भांति प्रबुद्ध बने रहते हैं।

३०२. दुष्पब्बज्जं दुरभिरमं, दुरावासा घरा दुखा।  
दुक्खोसमानसंवासो, दुक्खानुपतितद्धू।  
तस्मा न चद्धगू सिया, न च दुक्खानुपतितो सिया ॥

कष्टपूर्ण प्रव्रज्या में रत रहना दुष्कर होता है, न रहने योग्य घर दुःखद होते हैं, असमान (व्यक्ति) से सहवास दुःखदायी होता है, मार्ग (आवागमन) का पथिक होना दुःखपूर्ण होता है। इसलिए न तो (संसाररूपी) मार्ग का पथिक बने और न दुःख में पड़ने वाला बने।

३०३. सद्धो सीलेन सम्पन्नो, यसोभोगसमप्पितो।  
यं यं पदेसं भजति, तत्थ तत्थेव पूजितो ॥

श्रद्धावान, शीलवान, और यश और भोग से युक्त (कुलपुत्र) जिस-जिस प्रदेश में जाता है वहीं-वहीं (लाभ-सत्कार से) पूजित होता है।

३०४. दूरे सन्तो पकासेन्ति, हिमवन्तोव पब्बतो।  
असन्तेत्थ न दिस्सन्ति, रत्तिं खित्ता यथा सरा ॥

संत (लोग) हिमालय पर्वत के समान दूर से ही प्रकाशमान होते हैं, (किंतु) असंत (दुर्जन) यहीं (पास में होने पर भी) रात में फेंके गये बाण की भांति दिखलायी नहीं देते।

३०५. एकासनं एकसेय्यं, एको चरमतन्दितो।  
एको दमयमत्तानं, वनन्ते रमितो सिया ॥

एक आसन रखने वाला, एक शय्या रखने वाला, तन्द्रा रहित हो एकाकी विचरण करने वाला, अपने को दमन कर अकेला ही (स्त्री, पुरुष, शब्दादि से विरहित) वनांत में रमण करे।

पकिण्णकवग्गो एकवीसतिमो निद्धितो।

३०६. अभूतवादी निरयं उपेति, यो वापि क्त्वा न करोमि चाह ।  
उभोपि ते पेच्च समा भवन्ति, निहीनकम्मा मनुजा परत्थ ॥

असत्य बोलने वाला नरक में जाता है, और वह भी जो कि (पापकर्म) करके 'नहीं किया' - ऐसा कहता है। दोनों ही प्रकार के नीच कर्म करने वाले मनुष्य मर कर परलोक में एक-समान हो जाते हैं।

३०७. कासावकण्ठा बहवो, पापधम्मा असञ्जता ।  
पापा पापेहि कम्मेहि, निरयं ते उपपज्जरे ॥

कंठ में काषाय (वस्त्र) डाले कितने ही पापधर्मा (पापी) असंयमी हैं जो अपने पापकर्मों से नरक में उत्पन्न होते हैं।

३०८. सेय्यो अयोगुळो भुत्तो, तत्तो अगिसिखूपमो ।  
यञ्चे भुञ्जेय्य दुस्सीलो, रट्ठपिण्डमसञ्जतो ॥

असंयमी, दुराचारी होकर राष्ट्र का अन्न खाने से अग्नि-शिखा के समान तप्त लोहे के गोले को खाना अधिक अच्छा है।

३०९. चत्तारि ठानानि नरो पमत्तो, आपज्जति परदारूपसेवी ।  
अपुञ्जलाभं न निकामसेय्यं, निन्दं ततीयं निरयं चतुत्थं ॥

प्रमादी परस्त्रीगामी की चार गतियां होती हैं - (१) अपुण्य-लाभ, (२) सुख की नींद न आना, (३) निंदा, और (४) नरक।

३१०. अपुञ्जलाभोचगतीचपापिका, भीतस्स भीतायरीचथोकिका ।  
राजा च दण्डं गरुकं पणेति, तस्मा नरो परदारं न सेवे ॥

(अथवा) अपुण्य-लाभ, बुरी गति, भयभीत (पुरुष) की भयभीत (स्त्री) से अत्यल्प कामक्रीड़ा और राजा का (हाथ-पैर काटने जैसा) भारी दंड देना। इसलिए पुरुष परस्त्रीगमन न करे।

३११. कुसो यथा दुग्गतो, हत्थमेवानुकन्तति ।  
सामञ्जं दुप्परामट्ठं, निरयायुपकट्ठति ॥

जैसे ठीक से न पकड़ा गया कुश (=तीक्ष्ण धार वाला तृण) हाथ को ही छेद

देता है, (वैसे ही) गलत प्रकार से ग्रहण किया गया श्रामण्य नरक की ओर खींच ले जाता है।

३१२. यं किञ्चि सिथिलं कम्मं, संकिलिद्वञ्च यं वतं।  
सङ्कसरं ब्रह्मचरियं, न तं होति महप्फलं॥

जो कोई कर्म शिथिलता से किया जाय, जो व्रत मलिन है और जो ब्रह्मचर्य अशुद्ध है, वह बड़ा फल देने वाला नहीं होता।

३१३. कयिरा चे कयिराथेनं, दळ्हमेनं परक्कमे।  
सिथिलो हि परिब्बाजो, भिय्यो आकिरते रजं॥

यदि (कोई काम) करना हो तो उसे करे, उसमें दृढ़ पराक्रम के साथ लग जाय। शिथिल परिव्राजक (अपने भीतर रागरजादि होने से) अधिक मल बिखेरता है।

३१४. अकतं दुक्कटं सेय्यो, पच्छा तप्पति दुक्कटं।  
कतञ्च सुकतं सेय्यो, यं कत्वा नानुतप्पति॥

दुष्कृत (बुरे काम) का न करना श्रेयस्कर है (क्योंकि) दुष्कृत करने वाला पीछे अनुताप करता है; और सुकृत (अच्छे काम) का करना श्रेयस्कर है जिसे करके (पीछे) अनुताप नहीं करना पड़ता।

३१५. नगरं यथा पच्चन्तं, गुत्तं सन्तरबाहिरं।  
एवं गोपेथ अत्तानं, खणो वो मा उपच्चगा।  
खणातीता हि सोचन्ति, निरयम्हि समप्पिता॥

जैसे (कोई) सीमावर्ती नगर भीतर-बाहर से (खूब) रक्षित होता है, वैसे ही अपने आपको रक्षित रखे। क्षण भर भी न चूके, क्योंकि क्षण को चूके हुए लोग नरक में पड़ कर शोक करते हैं।

३१६. अलज्जिताये लज्जन्ति, लज्जिताये न लज्जरे।  
मिच्छादिद्विसमादाना, सत्ता गच्छन्ति दुग्गतिं॥

जो अलज्जा (के काम) में लज्जा करते हैं और लज्जा (के काम) में लज्जा नहीं करते, मिथ्या दृष्टि से ग्रस्त वे सत्त्व (प्राणी) दुर्गति को प्राप्त होते हैं।

३१७. अभये भयदस्सिनो, भये चाभयदस्सिनो।  
मिच्छादिद्विसमादाना, सत्ता गच्छन्ति दुग्गतिं॥

भयरहित (काम में) भय देखने वाले और भय (के काम) में भय को न देखने वाले मिथ्या दृष्टि से ग्रस्त सत्त्व (प्राणी) दुर्गति को प्राप्त होते हैं।

३१८. अवज्जे वज्जमतिनो, वज्जे चावज्जदस्सिनो।

मिच्छादिद्विसमादाना, सत्ता गच्छन्ति दुग्गतिं॥

अदोष में दोष बुद्धि रखने वाले और दोष में अदोष दृष्टि रखने वाले मिथ्या दृष्टि से ग्रस्त सत्त्व (प्राणी) दुर्गति को प्राप्त होते हैं।

३१९. वज्जञ्च वज्जतो जत्वा, अवज्जञ्च अवज्जतो।

सम्मादिद्विसमादाना, सत्ता गच्छन्ति सुग्गतिं॥

दोष को दोष, और अदोष को अदोष जान कर सम्यक्दृष्टिसंपन्न सत्त्व (प्राणी) सुगति को प्राप्त होते हैं।

निरयवग्गो द्वावीसतिमो निद्वितो।

३२०. अहं नागोव सङ्गमे, चापतो पतितं सरं।  
अतिवाक्यं तित्तिक्खिस्सं, दुस्सीलो हि बहुज्जनो ॥

जैसे (किसी) संग्राम में हाथी धनुष से छोड़े गये बाण को (सहन करता है) (वैसे ही) मैं (दूसरों के) कटुवचन को सहन करूंगा, क्योंकि (संसार में) दुःशील (व्यक्ति ही) अधिक हैं।

३२१. दन्तं नयन्ति समितिं, दन्तं राजाभिरूहति।  
दन्तो सेट्ठो मनुस्सेसु, योतिवाक्यं तित्तिक्खति ॥

दान्त (शिक्षित) हाथी को परिषद में ले जाते हैं। दान्त पर (ही) राजा चढ़ता है। मनुष्यों में भी दान्त (व्यक्ति ही) श्रेष्ठ होता है जो कि कटुवचन को सह लेता है।

३२२. वरमस्सतरा दन्ता, आजानीया च सिन्धवा।  
कुज्जरा च महानागा, अत्तदन्तो ततो वरं ॥

खच्चर, अच्छी नसल के सैंधव घोड़े और महानाग हाथी दान्त (शिक्षित) होने पर उत्तम होते हैं, (परंतु) अपने आप को दान्त किया हुआ (पुरुष) उनसे श्रेष्ठ होता है।

३२३. न हि एतेहि यानेहि, गच्छेय्य अगतं दिसं।  
यथात्तना सुदन्तेन, दन्तो दन्तेन गच्छति ॥

इन (हाथी, घोड़े आदि) सवारियों से बिना गयी दिशा (निर्वाण) तक नहीं जाया जा सकता, जैसे कि अपने आप को सुदान्त बना कर, (कोई) दान्त (व्यक्ति) दान्त (इंद्रियों) के साथ (वहां तक) चला जाता है।

३२४. धनपालो नाम कुज्जरो, कटुकभेदनो दुन्निवारयो।  
बद्धो कवळं न भुज्जति, सुमरति नागवनस्स कुज्जरो ॥

दुर्निवार, धनपाल नाम का हाथी जिसकी कनपट्टी से मद चू रहा है, बँध जाने पर कवल (कौर) नहीं खाता, (बल्लि) नागवन (हाथियों के जंगल) का स्मरण करता है।



३२५. भिद्धी यदा होति महग्घसो च, निद्दायिता सम्परिवत्तसायी ।  
महावराहोव निवापपुट्टो, पुनप्पुनं गब्भमुपेति मन्दो ॥

जो (पुरुष) आलसी, पेटू, निद्रालु, करवट बदल-बदल कर सोने वाला, और दाना खाकर पुष्ट हुए मोटे सूअर के समान होता है, वह मंदबुद्धि बार-बार गर्भ में पड़ता है।

३२६. इदं पुरे चित्तमचारि चारिकं, येनिच्छकं यत्थकामं यथासुखं ।  
तदज्जहं निग्गहेस्सामि योनिसो, हत्थिप्पभिन्नं विय अङ्कुसग्गहो ॥

यह जो जहां इच्छा हो, जहां कामना हो, जहां सुख दिखे, वहां चलायमान हो जाने वाला चित्त है, पहले इसे अचंचल बनाऊंगा। इसे ऐसे ही भलीभांति वश में करूंगा जैसे कि अंकुशधारी महावत बिगड़ैल हाथी को वश में करता है।

३२७. अप्पमादरता होथ, सचित्तमनुरक्खथ ।  
दुग्गा उद्धरथत्तानं, पङ्के सन्नोव कुज्जरो ॥

अप्रमाद में जुटो। (अपने) चित्त की रक्षा करो। कीचड़ में धँसे हाथी के समान अपने आपको कठिन मार्ग से बाहर निकालो (और निर्वाण के धरातल पर प्रतिष्ठापित करो)।

३२८. सचे लभेथ निपकं सहायं, सद्धिं चरं साधुविहारिधीरं ।  
अभिभुय्य सब्बानि परिस्सयानि, चरेय्य तेनत्तमनो सतीमा ॥

यदि (किसी को) साथ चलने के लिए (कोई) साधुविहारी, धैर्यसंपन्न, बुद्धिमान साथी मिल जाय, तो (वह) सारी परेशानियों को ताक पर रख कर प्रसन्नवदन और स्मृतिमान होकर उसके संग विचरण करे।

३२९. नो चे लभेथ निपकं सहायं, सद्धिं चरं साधुविहारिधीरं ।  
राजाव रट्ठं विजितं पहाय, एको चरे मातङ्गरज्जेव नागो ॥

यदि (किसी को) साथ चलने के लिए (कोई) साधुविहारी, धैर्यसंपन्न, बुद्धिमान साथी न मिले, तो (वह) पराजित राष्ट्र को छोड़ कर जाते हुए राजा के समान अथवा हस्तिवन में हाथी के समान अकेला विचरण करे।

३३०. एकस्स चरितं सेय्यो, नत्थि बाले सहायता ।  
एको चरेनच पापानि कयिरा, अप्पोस्सुक्को मातङ्गरज्जेव नागो ॥

अकेला विचरना उत्तम है, (किंतु) मूढ़ की मित्रता अच्छी नहीं। हस्तिवन में हाथी के समान अनासक्त होकर अकेला विचरण करे और पाप न करे।

**३३१. अत्थम्हि जातम्हि सुखा सहाया, तुट्ठी सुखा या इतरीतरेन।**

**पुञ्जं सुखं जीवितसङ्घयम्हि, सब्बस्स दुक्खस्स सुखं पहानं ॥**

काम पड़ने पर मित्रों का होना सुखकर है। जिस किसी (छोटी या बड़ी) चीज से संतुष्ट हो जाना (यह भी) सुखकारक है। जीवन के क्षय होने पर (किया हुआ) पुण्य सुखदायक होता है। सारे दुःखों का प्रहाण (अरहंत हो जाना) (सर्वाधिक) सुखकर है।

**३३२. सुखा मत्तेय्यता लोके, अथो पत्तेय्यता सुखा।**

**सुखा सामञ्जता लोके, अथो ब्रह्मञ्जता सुखा ॥**

लोक में माता की सेवा करना सुखकर है, (और) ऐसे ही पिता की सेवा (भी) सुखकर है। लोक में श्रमण की सेवा (आदर) करना सुखकर है, और (ऐसे ही) ब्राह्मण की सेवा (आदर) करना भी सुखकर है।

**३३३. सुखं याव जरा सीलं, सुखा सद्धा पतिट्ठिता।**

**सुखो पञ्जाय पटिलाभो, पापानं अकरणं सुखं ॥**

बुढ़ापे तक शील का पालन करना सुखकर (होता) है, अचल श्रद्धा सुखकर (होती) है, प्रज्ञा का लाभ सुखकर (होता) है (और) पाप (कर्मों) का न करना सुखकर (होता) है।

नागवग्गो तेवीसत्तिमो निट्ठितो।

३३४. मनुजस्स पमत्तचारिनो, तण्हा वड्ढति मालुवा विय ।  
सो प्लवती हुरा हुरं, फलमिच्छं वनस्मि वानरो ॥

प्रमत्त होकर आचरण करने वाले मनुष्य की तृष्णा मालुवा लता की भांति बढ़ती है, वन में फल की इच्छा से एक शाखा छोड़ दूसरी शाखा पकड़ते बंदर की तरह वह एक भव से दूसरे भव में भटकता रहता है।

३३५. यं एसा सहते जम्मी, तण्हा लोके विसत्तिका ।  
सोका तस्स पवड्ढन्ति, अभिवड्ढं वीरणं ॥

लोक में यह विषमयी तृष्णा जिस किसी को अभिभूत कर लेती है, उसके (दुःख-) शोक वैसे ही बढ़ने लगते हैं जैसे कि वर्षा ऋतु में 'बीरण' नाम का जंगली घास (बढ़ता रहता है)।

३३६. यो चेत्तं सहते जम्मि, तण्हं लोके दुरच्चयं ।  
सोका तम्हा पपतन्ति, उदबिन्दुव पोक्खरा ॥

इस (बार-बार) जन्मने वाली दुरतिक्रमणीय तृष्णा को जो लोक में अभिभूत कर देता है, उसके शोक (वैसे ही) झड़ जाते हैं जैसे पद्म (-पत्र) से पानी की बूंद।

३३७. तं वो वदामि भद्दं वो, यावन्तेत्थ समागता ।  
तण्हाय मूलं खणथ, उसीरत्थोव वीरणं ।  
मा वो नळं व सोतोव, मारो भज्जि पुनप्पुनं ॥

इसलिए मैं तुम्हें, जितने यहां आये हो, कहता हूं, तुम्हारे कल्याण के लिए कहता हूं - जैसे खस के लिए (बड़ी कुदाल लेकर) बीरण को खोदते हैं, ऐसे ही तृष्णा को जड़ से उखाड़ डालो। (कहीं ऐसा न हो कि) तुम्हें (देवपुत्र) मार (वैसे ही) बार-बार उखाड़ता रहे जैसे नदी के स्रोत में उगे हुए सरकंडे को (बड़े वेग से आता हुआ) नदी का प्रवाह।

३३८. यथापि मूले अनुपद्दवे दळ्हे, छिन्नोपि रुक्खो पुनरेव रूहति ।  
एवम्पि तण्हानुसये अनूहते, निब्बत्तती दुक्खमिदं पुनप्पुनं ॥

जैसे जड़ के बिल्कुल नष्ट न होने और (उसके) दृढ़ बने रहने पर कटा हुआ वृक्ष फिर उग जाता है, वैसे ही तृष्णा-रूपी अनुशय के (जड़ से) उच्छिन्न न होने पर यह दुःख बार-बार उत्पन्न होता है।

३३९. यस्स छत्तिसति सोता, मनापसवना भुसा।

बाहा वहन्ति दुद्धिं, सङ्कप्पा रागनिस्सिता ॥

जिसके छत्तीस स्रोत मन को प्रिय लगने वाली (वस्तुओं) की ही ओर जाते हों, उस मिथ्या दृष्टि वाले व्यक्ति को उसके राग निश्चित संकल्प बहा ले जाते हैं।

३४०. सवन्ति सब्बधि सोता, लता उप्पज्ज तिद्धति।

तच्च दिस्वा लतं जातं, मूलं पज्जाय छिन्दथ ॥

(ये) स्रोत सभी ओर बहते हैं (जिसके कारण) (तृष्णारूपी) लता अंकुरित रहती है। उस उत्पन्न हुई लता को देख कर प्रज्ञा से उसकी जड़ को काट डालो।

३४१. सरितानि सिनेहितानि च, सोमनस्सानि भवन्ति जन्तुनो।

ते सातसिता सुखेसिनो, ते वे जातिजरूपगा नरा ॥

(ये) (तृष्णारूपी) नदियां प्राणियों के चित्त को प्रसन्न करने वाली होती हैं। इस सुख में आसक्त सुख की चाहना करने वाले जन्म, बुढ़ापा, (रोग तथा मृत्यु) के फेर में जा पड़ते हैं।

३४२. तसिणाय पुरक्खता पजा, परिसप्पन्ति ससोव बन्धितो।

संयोजनसङ्गसत्तका, दुक्खमुपेन्ति पुनप्पुनं चिराय ॥

तृष्णा से परिवारित प्राणी (जंगल में किसी व्याध द्वारा) बँधे हुए खरहे के समान चक्कर काटते रहते हैं। (मन के) बंधनों में फँसे हुए (लोग) लंबे समय तक बार-बार (जन्मादि का) दुःख पाते हैं।

३४३. तसिणाय पुरक्खता पजा, परिसप्पन्ति ससोव बन्धितो।

तस्मा तसिणं विनोदये, आकङ्खन्त विरागमत्तनो ॥

तृष्णा से परिवारित प्राणी (जंगल में किसी व्याध द्वारा) बँधे हुए खरहे के समान चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए अपने वैराग्य की आकांक्षा करते हुए (साधक) तृष्णा को दूर करे।

३४४. यो निब्बनथो वनाधिमुत्तो, वनमुत्तो वनमेव धावति।

तं पुग्गलमेथ पस्सथ, मुत्तो बन्धनमेव धावति ॥

जो तृष्णा से छूट कर, तृष्णामुक्त हो, तृष्णा की ओर ही दौड़ता है, उस (व्यक्ति) को वैसे ही जानो जैसे (कोई बंधन से मुक्त हुआ) पुरुष फिर बंधन की ओर ही भागने लगे।

३४५. न तं दळ्हं बन्धनमाहु धीरा, यदायसं दारुजपब्बजञ्च ।

सारत्तरत्ता मणिकुण्डलेसु, पुत्तेसु दारेसु च या अपेक्खा ॥

(यह) जो लोहे, लकड़ी, या रस्सी का बंधन है, उसे पंडित (जन) दृढ़ बंधन नहीं कहते। (वस्तुतः दृढ़ बंधन होता है) मणियों, कुंडलों, पुत्रों तथा स्त्री में तृष्णा का होना।

३४६. एतं दळ्हं बन्धनमाहु धीरा, ओहारिनं सिथिलं दुप्पमुञ्चं ।

एतम्पि छेत्वान परिब्बजन्ति, अनपेक्खिनो कामसुखं पहाय ॥

पंडित (जन) इसी को दृढ़, पतनोन्मुख, शिथिल और दुस्त्याज्य बंधन कहते हैं। वे अपेक्षारहित हो, कामसुख को छोड़ कर, इस (दृढ़ बंधन) को भी (ज्ञान-रूपी खड्ग से) काट कर प्रव्रजित हो जाते हैं।

३४७. ये रागरत्तानुपतन्ति सोतं, सयंकतं मक्कटकोव जालं ।

एतम्पि छेत्वान वजन्ति धीरा, अनपेक्खिनो सब्बदुक्खं पहाय ॥

जैसे मकड़ा स्वयं बनाये हुए जाल में (फँस जाता है), वैसे ही राग-रंजित (लोग) स्वयं बनाये (तृष्णारूपी) स्रोत में गिर जाते हैं। पंडित (जन) सारे दुःखों का प्रहाण कर इस स्रोत को भी काट कर अपेक्षारहित हो चल देते हैं।

३४८. मुञ्च पुरे मुञ्च पच्छतो, मज्झे मुञ्च भवस्स पारगू ।

सब्बत्थ विमुत्तमानसो, न पुनं जातिजरं उपेहिसि ॥

आगे (भूत), पीछे (भविष्य) और मध्य (वर्तमान) की (सारी बातों को) छोड़ दो अर्थात् सभी स्कंधों को त्याग दो (और उन्हें छोड़ कर) भव (-सागर) के पार हो जाओ। सब ओर से विमुक्तचित्त होकर (तुम) फिर जन्म, बुढ़ापा (और मृत्यु) को नहीं प्राप्त होगे।

३४९. वितक्कमथितस्सजन्तुनो, तिब्बरागस्ससुभानुपस्सिनो ।

भिय्यो तण्हा पवड्ढति, एस खो दळ्हं करोति बन्धनं ॥

(कामवितर्कादि से) ग्रस्त, तीव्र राग युक्त और शुभ ही शुभ (सुंदर ही सुंदर) देखने वाले प्राणी की तृष्णा और भी प्रवृद्ध होती (खूब बढ़ती) है। (इससे) वह (अपने लिए) और भी दृढ़ बंधन तैयार करता है।

३५०. वितक्कूपसमेचयोरतो, असुभं भावयते सदा सतो ।

एस खो ब्यन्ति काहिति, एस छेच्छति मारबन्धनं ॥

जो वितर्कों को शांत करने में लगा है (और) सदा स्मृतिमान रह अशुभ की भावना करता है, वह मार के बंधन को काट देगा, वह निश्चय ही इस (तृष्णा) का विनाश कर देगा।

३५१. निद्वङ्गतो असन्तासी, वीततण्हो अनङ्गणो ।  
अच्छिन्दि भवसल्लानि, अन्तिमोयं समुस्सयो ॥

जिसने लक्ष्य (अर्हत्व) पा लिया हो, जो निर्भय, तृष्णारहित और मलविहीन हो गया हो, जिसने भव (प्राप्त कराने वाले) शल्यों को काट दिया हो, उसका यह अंतिम जीवन (होता) है।

३५२. वीततण्हो अनादानो, निरुत्तिपदकोविदो ।  
अक्खरानं सन्निपातं, जज्जा पुब्बापरानि च ।  
स वे “अन्तिमसारीरो, महापज्जो महापुरिसो”ति वुच्चति ॥

जो तृष्णारहित अपरिग्रही, निरुक्ति और पद (चार प्रतिसंभिदाओं) में निपुण हो, और अक्षरों को पहले पीछे (के क्रम से) रखना जानता हो, वही अंतिम देहधारी, महाप्राज्ञ और महापुरुष कहा जाता है।

३५३. सब्बाभिभू सब्बविदूहमस्मि, सब्बेसु धम्मेषु अनूपलित्तो ।  
सब्बज्जहो तण्हक्खये विमुत्तो, सयं अभिज्जाय कमुद्दिसेय्यं ॥

(मैं) सबको अभिभूत (परास्त) करने वाला, सर्वज्ञ, सारे धर्मों से अलित, सर्वत्यागी हूँ, तृष्णा का क्षय हो जाने से विमुक्त हूँ। (परम ज्ञान को) स्वयं की अभिज्ञा से जान कर (मैं) किसको (अपना उपाध्याय या आचार्य) बतलाऊँ?

३५४. सब्बदानं धम्मदानं जिनाति, सब्बरसं धम्मरसो जिनाति ।  
सब्बरतिं धम्मरति जिनाति, तण्हक्खयो सब्बदुक्खं जिनाति ॥

धर्म का दान सब दानों को जीत लेता है (सब दानों में श्रेष्ठ है)। धर्म का रस सब रसों को जीत लेता है (सब रसों में श्रेष्ठ है)। धर्म में रमण करना सभी रमण-सुखों को जीत लेता है (सब रतियों में श्रेष्ठ है)। तृष्णा का क्षय सब दुःखों को जीत लेता है (अर्थात्, सबसे श्रेष्ठ है)।

३५५. हनन्ति भोगा दुम्मेधं, नो च पारगवेसिनो ।  
भोगतण्हाय दुम्मेधो, हन्ति अज्जेव अत्तनं ॥

(संसार को) पार करने का प्रयत्न न करने वाले दुर्बुद्धि को भोग नष्ट कर देते

हैं। भोगों की तृष्णा में पड़ कर (वह) दुर्बुद्धि पराये के समान अपना ही हनन कर लेता है।

**३५६. तिणदोसानि खेत्तानि, रागदोसा अयं पजा।  
तस्मा हि वीतरागेषु, दिन्नं होति महप्फलं॥**

खेतों का दोष है (इनमें उगने वाले भांति-भांति के) तृण (क्योंकि ऐसे खेत बहुत नहीं उपजते)। इस प्रजा का दोष है (इसके अंदर जागने वाला) राग। (ऐसे लोगों को दान देने से कोई बड़ा फल प्राप्त नहीं होता)। इसलिए वीतराग (व्यक्तियों) को (ही दान देना चाहिए) जिससे महान फल प्राप्त होता है।

**३५७. तिणदोसानि खेत्तानि, दोसदोसा अयं पजा।  
तस्मा हि वीतदोसेसु, दिन्नं होति महप्फलं॥**

खेतों का दोष तृण है। इस प्रजा का दोष है द्वेष। इसलिए वीतद्वेष (व्यक्तियों) को दान देने से महान फल प्राप्त होता है।

**३५८. तिणदोसानि खेत्तानि, मोहदोसा अयं पजा।  
तस्मा हि वीतमोहेसु, दिन्नं होति महप्फलं॥**

खेतों का दोष तृण है। इस प्रजा का दोष है मोह। इसलिए वीतमोह (व्यक्तियों) को दान देने से महान फल प्राप्त होता है।

**३५९. तिणदोसानि खेत्तानि, इच्छादोसा अयं पजा।  
तस्मा हि विगतिच्छेषु, दिन्नं होति महप्फलं॥  
तिणदोसानि खेत्तानि, तण्हादोसा अयं पजा।  
तस्मा हि वीततण्हेसु, दिन्नं होति महप्फलं॥**

खेतों का दोष तृण है। इस प्रजा का दोष है इच्छा। इसलिए इच्छारहित (व्यक्तियों) को दान देने से महान फल प्राप्त होता है। खेतों का दोष तृण है। इस प्रजा का दोष है तृष्णा। इसलिए तृष्णारहित (व्यक्तियों) को दान देने से महान फल प्राप्त होता है।

तण्हावग्गो चतुवीसतिमो निद्धितो।

३६०. चक्खुना संवरो साधु, साधु सोतेन संवरो।  
घानेन संवरो साधु, साधु जिह्वाय संवरो ॥

चक्षु का संवर (संयम) अच्छा है, अच्छा है श्रोत्र का संवर। घ्राण का संवर अच्छा है, अच्छा है जिह्वा का संवर।

३६१. कायेन संवरो साधु, साधु वाचाय संवरो।  
मनसा संवरो साधु, साधु सब्बत्थ संवरो।  
सब्बत्थ संवृतो भिक्षु, सब्बदुक्खा पमुच्चति ॥

काय (शरीर) का संवर अच्छा है, अच्छा है वाणी का संवर। मन का संवर अच्छा है, अच्छा है सर्वत्र (इंद्रियों का) संवर। सर्वत्र संवर-प्राप्त भिक्षु (साधक) सारे दुःखों से मुक्त हो जाता है।

३६२. हत्थसंयतो पादसंयतो, वाचासंयतो संयतुत्तमो।  
अज्झत्तरतो समाहितो, एको सन्तुसितो तमाहु भिक्षुं ॥

जो हाथ, पैर और वाणी में संयत है, (जो) उत्तम संयमी है, अपने भीतर की (सच्चाइयों को) जानने में लगा है, समाधियुक्त, एकाकी और संतुष्ट है, उसे 'भिक्षु' कहते हैं।

३६३. यो मुखसंयतो भिक्षु, मन्तभाणी अनुद्धतो।  
अत्थं धम्मञ्च दीपेति, मधुरं तस्स भासितं ॥

जो भिक्षु मुख से संयत है, सोच-विचार कर बोलता है, उद्धत नहीं है, अर्थ और धर्म को प्रकाशित करता है, उसका बोल मीठा होता है।

३६४. धम्मरामो धम्मरतो, धम्मं अनुविचिन्तयं।  
धम्मं अनुस्सरं भिक्षु, सद्धम्मा न परिहायति ॥

धर्म में रमण करने वाला, धर्म में रत, धर्म का चिंतन करते, धर्म का पालन करते भिक्षु (साधक) सद्धर्म से च्युत नहीं होता।

३६५. सलाभं नातिमज्जेय्य, नाज्जेसं पिहयं चरे।  
अज्जेसं पिहयं भिक्षु, समाधिं नाधिगच्छति ॥

अपने लाभ की अवहेलना नहीं करनी चाहिए, दूसरों के (लाभ की) स्पृहा नहीं



करनी चाहिए। दूसरों के (लाभ की) स्पृहा करने वाला भिक्षु (साधक) चित्त की एकाग्रता को नहीं प्राप्त कर पाता।

**३६६. अप्पलाभोपि चे भिक्खु, सलाभं नातिमज्जति।  
तं वे देवा पसंसन्ति, सुद्धाजीविं अतन्दितं ॥**

थोड़ा-सा लाभ मिलने पर भी यदि भिक्षु (साधक) अपने लाभ की अवहेलना नहीं करता है, तो उस शुद्ध जीविका वाले, निरालस की देवता प्रशंसा करते हैं।

**३६७. सब्बसो नामरूपस्मिं, यस्स नत्थि ममायितं।  
असता च न सोचति, स वे “भिक्खू”ति वुच्चति ॥**

नामरूप के प्रति जिसका बिल्कुल ही 'मैं' 'मेरे' का भाव नहीं, जो (उनके) नहीं होने पर शोक नहीं करता, वही 'भिक्षु' कहा जाता है।

**३६८. मेत्ताविहारी यो भिक्खु, पसन्नो बुद्धसासने।  
अधिगच्छे पदं सन्तं, सङ्घारूपसमं सुखं ॥**

मैत्री (भावना) से विहार करता हुआ जो भिक्षु (साधक) बुद्ध के शासन में प्रसन्न रहता है, (वह) (सभी) संस्कारों का शमन करने वाले शांत (और) सुखमय पद (निर्वाण) को प्राप्त करता है।

**३६९. सिञ्च भिक्खु इमं नावं, सित्ता ते लहुमेस्सति।  
छेत्वा रागञ्च दोसञ्च, ततो निब्बानमेहिसि ॥**

हे भिक्षु (साधक)! इस (आत्मभाव नाम की) नाव को उलीचो, उलीचने पर यह तुम्हारे लिए हल्की हो जायगी। राग और द्वेष (रूपी बंधनों) का छेदन कर, फिर तुम निर्वाण को प्राप्त कर लोगे।

**३७०. पञ्च छिन्दे पञ्च जहे, पञ्च चुत्तरि भावये।  
पञ्चसङ्गातिगोभिक्खु, “ओघतिण्णो”तिवुच्चति ॥**

(सत्काय-दृष्टि, विचिकित्सा, शीलव्रतपरामर्श, कामराग और व्यापाद - इन) पांच (अवरभागीय संयोजनों) का छेदन करे, (रूपराग, अरूपराग, मान, औन्दत्य और अविद्या - इन) पांच (ऊर्ध्वभागीय संयोजनों) को छोड़ दे, और तदुपरांत (इनके प्रहाण के लिए श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञा - इन) पांच (इंद्रियों) की भावना करे। जो भिक्षु (साधक) पांच आसक्तियों (राग, द्वेष, मोह, मान और दृष्टि) का अतिक्रमण कर चुका हो, वह (काम, भव, दृष्टि तथा

अविद्या रूपी चार प्रकार की) बाढ़ों को पार किया हुआ 'ओघतीर्ण' कहा जाता है।

३७१. ज्ञाय भिक्खु मा पमादो, मा ते कामगुणे रमेसु चित्तं।  
मालोहगुळंगिलीपमतो, माकन्दि "दुक्खमिद"न्ति ड्हमानो ॥

हे भिक्षु (साधक)! ध्यान करो, प्रमाद में मत पड़ो। तुम्हारा चित्त (पांच प्रकार के) कामगुणों (भोगों) के चक्कर में मत पड़े। प्रमत्त होकर मत लोहे के गोले को निगलो। 'हाय! यह दुःख' कह कर जलते हुए तुम्हें (कहीं) क्रंदन न करना पड़े।

३७२. नत्थि ज्ञानं अपज्जस्स, पज्जा नत्थि अज्ञायतो।  
यम्हि ज्ञानञ्च पज्जा च, स वे निब्बानसन्तिके ॥

प्रज्ञाविहीन (पुरुष) का ध्यान नहीं होता, ध्यान न करने वाले को प्रज्ञा नहीं होती। जिसके पास ध्यान और प्रज्ञा (दोनों) हैं, वही निर्वाण के समीप (स्थित) होता है।

३७३. सुज्जागारं पविट्ठस्स, सन्तचित्तस्स भिक्खुनो।  
अमानुसी रति होति, सम्मा धम्मं विपस्सतो ॥

किसी शून्यागार में प्रवेश करके कोई शांत-चित्त साधक जब सम्यक रूप से धर्मानुपश्यना करता है, तब उसे लोकोत्तर सुख प्राप्त होता है (जो कि सामान्य मानवीय लोकीय सुखों से परे होता है)।

३७४. यतो यतो सम्मसति, खन्धानं उदयब्बयं।  
लभती पीतिपामोज्जं, अमतं तं विजानतं ॥

साधक (सम्यक सावधानता के साथ) जब-जब (शरीर और चित्त) स्कंधों के उदय-व्यय रूपी अनित्यता की विपश्यना द्वारा अनुभूति करता है, तब-तब उसे प्रीति-प्रमोद (रूपी अध्यात्म-सुख) की उपलब्धि होती है। ज्ञानियों के लिए यह अमृत है।

३७५. तत्रायमादि भवति, इध पज्जस्स भिक्खुनो।  
इन्द्रियगुत्ति सन्तुट्ठि, पातिमोक्खे च संवरो ॥

यहां (इस धर्म में) प्रज्ञावान भिक्षु (साधक) को आरंभ में करना होता है- इंद्रियों का संवर, संतोष और प्रातिमोक्ष (भिक्षु-विनय के नियमों) में संवर।

३७६. मित्ते भजस्सु कल्याणे, सुद्धाजीवे अतन्दिते ।  
पटिसन्धारवुत्त्यस्स, आचारकुसलो सिया ।  
ततो पामोज्जबहुलो, दुक्खस्सन्तं करिस्सति ॥

(वह इसके लिए) शुद्ध जीविका वाले, निरालस, कल्याणकारी मित्रों का साथ करे। वह मैत्रीपूर्ण स्वागत करने वाला हो, आचार-पालन में कुशल हो। उससे वह प्रमोद की बहुलता के साथ दुःख का अंत कर लेगा।

३७७. वस्सिका विय पुप्फानि, महवानि पमुञ्चति ।  
एवं रागञ्च दोसञ्च, विप्पमुञ्चेथ भिक्खवो ॥

(जैसे) जूही (अपने) कुम्हलाये हुए फूलों को छोड़ देती है, वैसे ही हे भिक्षुओ (साधको)! (तुम) राग और द्वेष को छोड़ दो।

३७८. सन्तकायो सन्तवाचो, सन्तवा सुसमाहितो ।  
वन्तलोकामिसो भिक्खु, “उपसन्तो”ति वुच्चति ॥

शरीर (और) वाणी से शांत, शांतिप्राप्त, सुसमाहित, लोक के आमिष (लौकिक भोगों) को वमन किये हुए भिक्षु (साधक) को ‘उपशांत’ कहा जाता है।

३७९. अत्तना चोदयत्तानं, पटिमंसेथ अत्तना ।  
सो अत्तगुत्तो सतिमा, सुखं भिक्खु विहाहिसि ॥

जो अपने आपको स्वयं प्रेरित करे, अपना परीक्षण स्वयं करे, वह अपने द्वारा रक्षित, स्मृतिमान भिक्षु (साधक) सुखपूर्वक विहार करेगा।

३८०. अत्ता हि अत्तनो नाथो, को हि नाथो परो सिया ।  
अत्ता हि अत्तनो गति ।  
तस्मा संयममत्तानं, अस्सं भद्रं वाणिजो ॥

व्यक्ति स्वयं ही अपना स्वामी है, स्वयं ही अपनी गति (शरण) है। इसलिए अपने आपको संयत करे, वैसे ही जैसे कि अच्छे घोड़ों का व्यापारी अपने घोड़ों को (करता है)।

३८१. पामोज्जबहुलो भिक्खु, पसन्नो बुद्धसासने ।  
अधिगच्छे पदं सन्तं, सद्धारूपसमं सुखं ॥

बुद्ध के शासन में प्रसन्न (रहने वाला) प्रमोदबहुल भिक्षु (साधक) (सभी)

संस्कारों के उपशमन से (प्राप्त होने वाले) सुखमय शांत पद (निर्वाण) को प्राप्त करे।

३८२. यो हवे दहरो भिक्खु, युज्जति बुद्धसासने।  
सोमं लोकं पभासेति, अब्भा मुत्तोव चन्दिमा ॥

जो कोई तरुण साधक भी बुद्ध के शासन में लग जाता है, वह (अर्हत्व-प्राप्ति के मार्ग के ज्ञान से) मेघमुक्त चंद्रमा के समान इस (खंधादिभेद) लोक को प्रकाशित करता है।

भिक्खुवग्गो पञ्चवीसतिमो निट्ठितो।

३८३. छिन्द सोतं परक्कम्म, कामे पनुद ब्राह्मण।  
सङ्घारानं खयं जत्वा, अकतञ्जूसि ब्राह्मण ॥

हे ब्राह्मण! (तृष्णारूपी) स्रोत को काट दे, पराक्रम कर कामनाओं को दूर कर। संस्कारों के क्षय को जान कर, हे ब्राह्मण! (तू) अकृत (निर्वाण) का जानने वाला हो जा।

३८४. यदा द्वयेसु धम्मेसु, पारगू होति ब्राह्मणो।  
अथस्स सब्बे संयोगा, अत्थं गच्छन्ति जानतो ॥

जब (कोई) ब्राह्मण दो धर्मों (शमथ और विपश्यना) में पारंगत हो जाता है, तब उस जानकार के सभी बंधन नष्ट हो जाते हैं।

३८५. यस्स पारं अपारं वा, पारापारं न विज्जति।  
वीतद्वरं विसंयुत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जिसके पार (भीतर के छह आयतन - आंख, कान, नाक, जीभ, काय और मन), अपार (बाहर के छह आयतन - रूप, शब्द, गंध, रस, स्पर्श और धर्म) या पार-अपार (ये दोनों ही, अर्थात् 'मैं' 'मेरे' का भाव) नहीं हैं, जो निर्भय और अनासक्त है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

३८६. ज्ञायिं विरजमासीनं, कतकिच्चमनासवं।  
उत्तमत्थमनुप्पत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

(जो) ध्यानी, विमल, आसनबद्ध (स्थिर), कृतकृत्य, और आश्रवरहित हो, जिसने उत्तम अर्थ (निर्वाण) को प्राप्त कर लिया हो, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

३८७. दिवा तपति आदिच्चो, रत्तिमाभाति चन्दिमा।  
सन्नद्धो खत्तियो तपति, ज्ञायी तपति ब्राह्मणो।  
अथ सब्बमहोरत्तिं, बुद्धो तपति तेजसा ॥

दिन में सूर्य तपता है, रात में चंद्रमा भासता है, कवच पहन क्षत्रिय चमकता है, ध्यान करता हुआ ब्राह्मण चमकता है, और सारे रात-दिन बुद्ध (अपने) तेज से चमकते हैं।

३८८. बाहितपापोति ब्राह्मणो, समचरिया समणोति वुच्चति ।  
पब्बाजयमत्तनो मलं, तस्मा “पब्बजितो”ति वुच्चति ॥

ब्राह्मण वह (कहलाता) है जिसने पापों को बहा दिया, श्रमण वह है जिसकी चर्या समतापूर्ण है, और प्रव्रजित वह कहलाता है जिसने अपने चित्त के मैल दूर कर लिये।

३८९. न ब्राह्मणस्स पहरेय्य, नास्स मुञ्चेथ ब्राह्मणो ।  
धी ब्राह्मणस्स हन्तारं, ततो धी यस्स मुञ्चति ॥

ब्राह्मण (निष्पाप) पर प्रहार नहीं करना चाहिए, (और) ब्राह्मण को भी उस (प्रहार करने वाले) पर कोप नहीं करना चाहिए। धिक्कार है ब्राह्मण की हत्या करने वाले पर, और उससे भी अधिक धिक्कार है उस पर जो (इसके लिए) कोप करता है।

३९०. न ब्राह्मणस्सेतदकिञ्चि सेय्यो, यदा निसेधो मनसो पिथेहि ।  
यतो यतो हिंसमनो निवत्तति, ततो ततो सम्मतिमेव दुक्खं ॥

ब्राह्मण के लिए यह कम श्रेयस्कर नहीं होता जब (वह) मन से प्रियों को निकाल देता है। जहां-जहां मन हिंसा से टलता है, वहां-वहां दुःख शांत होता ही है।

३९१. यस्स कायेन वाचाय, मनसा नत्थि दुक्कटं ।  
संवुतं तीहि ठानेहि, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो शरीर से, वाणी से और मन से दुष्कर्म नहीं करता, जो इन तीनों क्षेत्रों में संयमयुक्त है, उसे (ही) मैं ब्राह्मण कहता हूं।

३९२. यम्हा धम्मं विजानेय्य, सम्मासम्बुद्धदेसितं ।  
सक्कच्चं तं नमस्सेय्य, अग्गिहुत्तं ब्राह्मणो ॥

जिस (किसी) से सम्यक संबुद्ध द्वारा उपदिष्ट धर्म को जाने, उसे (वैसे ही) सत्कारपूर्वक नमस्कार करे जैसे अग्निहोत्र को ब्राह्मण (नमस्कार करता है)।

३९३. न जटाहि न गोत्तेन, न जच्चा होति ब्राह्मणो ।  
यम्हि सच्चञ्च धम्मो च, सो सुची सो च ब्राह्मणो ॥

न जटा से, न गोत्र से, न जन्म से ही ब्राह्मण होता है। जिसमें सत्य (सोलह

प्रकार से प्रतिवेधन किये हुए चार आर्य-सत्य) और (नौ प्रकार के लोकोत्तर) धर्म हैं, वही शुचि (पवित्र) है और वही ब्राह्मण है।

३९४. किं ते जटाहि दुम्भेध, किं ते अजिनसाटिया।

अब्भन्तरं ते गहनं, बाहिरं परिमज्जसि॥

अरे दुष्प्रज्ञ! जटाओं से तेरा क्या बनेगा? मृगचर्म धारण करने से तेरा क्या लाभ होगा? भीतर तो तेरा चित्त गहन मलीनता से भरा पड़ा है। बाहर-बाहर से तू इस शरीर को क्या रगड़ता-धोता है?

३९५. पंसुकूलधरं जन्तुं, किसं धमनिसन्थतं।

एकं वनस्मिं ज्ञायन्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं॥

जो फटे चीथड़ों को धारण करता है, जो कृश है, जिसके शरीर की सभी नसें दिखाई पड़ती है, और जो वन में एकाकी ध्यान करने वाला है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

३९६. न चाहं ब्राह्मणं ब्रूमि, योनिजं मत्तिसम्भवं।

भोवादि नाम सो होति, सचे होति सकिञ्चनो।

अकिञ्चनं अनादानं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं॥

यदि वह परिग्रही (आसक्ति युक्त) है और भो वादी है तो (ब्राह्मणी) माता के गर्भ से उत्पन्न होने पर भी उसे मैं ब्राह्मण नहीं कहता। जो अपरिग्रही है और अनासक्त है उसे ही मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

३९७. सब्बसंयोजनं छेत्वा, यो वे न परितस्सति।

सङ्गातिगं विसंयुत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं॥

जो सारे संयोजनों (बंधनों) को काट कर भय नहीं खाता, जो तृष्णा एवं संयोजन के पार चला गया है, और जिसे संसार में आसक्ति नहीं है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

३९८. छेत्वा नद्धिं वरत्तञ्च, सन्दानं सहनुक्कमं।

उक्खित्तपलिघं बुद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं॥

जो नद्धा (क्रोध), वरत्रा (तृष्णा रूपी रस्सी), संदान (बासठ प्रकार की दृष्टियां रूपी पगहे), और हनुक्कम (मुंह पर बांधे जाने वाले जाल, अनुशय) को काट कर तथा पटिघ (अविद्या रूपी जूए) को (उतार) फेंक बुद्ध हुआ, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

३९९. अक्कोसं वधबन्धञ्च, अदुट्टो यो तित्तिक्खति ।

खन्तीबलं बलानीकं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो (चित्त को) बिना दूषित किये गाली, वध (दण्ड) और बंधन (कारावास) को सह लेता है, सहन-शक्ति (क्षमा-बल) ही जिसकी सेना है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४००. अक्कोधनं वतवन्तं, सीलवन्तं अनुस्सदं ।

दन्तं अन्तिमसारीरं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो अक्रोधी, (धुत-) व्रती, शीलवान, (तृष्णा के न रहने से) निरभिमानी है, (दंभी नहीं है), (छह इंद्रियों का दमन कर लेने से) दान्त (संयमी) और अंतिम शरीर धारी है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०१. वारि पोक्खरपत्तेव, आरगोरिव सासपो ।

यो न लिम्पति कामेसु, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

पद्म-पत्र पर जल और सूई केसिरे पर सरसों के दाने के समान जो कामभोगों में लिप्त नहीं होता है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०२. यो दुक्खस्स पजानाति, इधेव खयमत्तनो ।

पन्नभारं विसंयुत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो यहीं (इसी लोक में) अपने (खंध-) दुःख के क्षय को प्रज्ञापूर्वक जान लेता है, जिसने अपना बोझ उतार फेंका है, (और) जो आसक्तिरहित है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०३. गम्भीरपज्जं मेधाविं, मग्गामग्गस्स कोविदं ।

उत्तमत्थमनुप्पत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

गहन प्रज्ञा वाले, मेधावी, मार्ग-अमार्ग के पंडित, उत्तम अर्थ (निर्वाण) को प्राप्त हुए (व्यक्ति) को मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०४. असंसदुं गहट्टेहि, अनागारेहि चूभयं ।

अनोकसारिमप्पिच्छं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो गृहस्थों तथा गृह-त्यागियों दोनों में लिप्त नहीं होता, जो बिना (ठौर-) ठिकाने के घूमने वाला और अल्पेच्छ है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।



४०५. निधाय दण्डं भूतेसु, तसेसु थावरेसु च।

यो न हन्ति न घातेति, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

स्थावर व जंगम (चर व अचर) सभी प्राणियों के प्रति जिसने दंड त्याग दिया है (हिंसा त्याग दी है), जो न किसी की हत्या करता है, न हत्या करवाता है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०६. अविरुद्धं विरुद्धेसु, अत्तदण्डेसु निब्बुतं।

सादानेसु अनादानं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो विरोधियों के बीच अविरोधी (बन कर) रहता है, दंडधारियों के बीच शांति से रहता है, परिग्रह करने वालों में अपरिग्रही (होकर) रहता है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०७. यस्स रागो च दोसो च, मानो मक्खो च पातितो।

सासपोरिव आरग्गा, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जिसके (चित्त से) राग, द्वेष, अभिमान और म्रक्ष (डाह) ऐसे ही गिर पड़े हैं जैसे सूई के सिरे से सरसों के दाने, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०८. अकक्कसं विज्जापनिं, गिरं सच्चमुदीरये।

याय नाभिसजे कच्चि, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो (इस प्रकार की) अकर्कश, सार्थक (विषय को स्पष्ट करने वाली), सच्ची वाणी को बोले जिससे किसी को पीड़ा न पहुंचे, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४०९. योध दीघं व रस्सं वा, अणुं थूलं सुभासुभं।

लोके अदिन्नं नादियति, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो यहां इस लोक में लम्बी या छोटी, मोटी या महीन, सुंदर या असुंदर वस्तु बिना दिये नहीं लेता, अर्थात् उसकी चोरी नहीं करता, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४१०. आसा यस्स न विज्जन्ति, अस्मिं लोके परम्हि च।

निरासासं विसंयुत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जिसके (मन में) इस लोक अथवा परलोक के संबंध में कोई आशा-आकांक्षा नहीं रह गयी है, जो सभी प्रकार की आशाओं-आकांक्षाओं (और आसक्तियों) से मुक्त हो चुका है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूं।

४११. यस्सालया न विज्जन्ति, अज्जाय अकथंकथी ।

अमतोगधमनुप्पत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जिसको आलय (तृष्णा) नहीं है, जो सब कुछ जान कर संदेहरहित हो गया है, जिसने अवगाहन करके (डुबकी लगा कर) निर्वाण प्राप्त कर लिया है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१२. योध पुज्जञ्च पापञ्च, उभो सङ्गमुपच्चगा ।

असोकं विरजं सुद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो यहां (इस लोक में) पुण्य और पाप दोनों के प्रति आसक्ति से परे चला गया है, जो शोकरहित, विमल और शुद्ध है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१३. चन्दंव विमलं सुद्धं, विप्पसन्नमनाविलं ।

नन्दीभवपरिक्खीणं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो चंद्रमा के समान विमल, शुद्ध, निखरा हुआ और मलरहित है, और (जिसकी) भवतृष्णा पूरी तरह क्षीण हो गयी है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१४. योमं पलिपथं दुगं, संसारं मोहमच्चगा ।

तिण्णो पारगतो ज्ञायी, अनेजो अकथंकथी ।

अनुपादाय निब्बुतो, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जिसने इस दुर्गम संसार (जन्म-मरण) के चक्कर में डालने वाले मोह-रूपी उल्टे मार्ग को त्याग दिया है, जो तरा हुआ, पार गया हुआ, ध्यानी, (तृष्णाविरहित होने से) स्थिर, संदेहरहित और बिना किसी उपादान के निर्वाणलाभी हो गया है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१५. योध कामे पहन्त्वान, अनागारो परिब्बजे ।

कामभवपरिक्खीणं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो यहां (इस लोक में) कामभोगों का परित्याग कर, घर-बार छोड़ कर प्रव्रजित हो जाय, और जिसका कामभव पूरी तरह क्षीण हो गया हो, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१६. योध तण्हं पहन्त्वान, अनागारो परिब्बजे ।

तण्हाभवपरिक्खीणं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो यहां (इस लोक में) तृष्णा का परित्याग कर, घर-बार छोड़ कर प्रव्रजित हो

जाय, और जिसकी (भवतृष्णा) पूरी तरह क्षीण हो गयी हो, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१७. हित्वा मानुसकं योगं, दिब्बं योगं उपच्चगा।  
सब्बयोगविसंयुत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो मानुषिक बंधन और दैवी बंधन से परे चला गया है, जो सब प्रकार के बंधनों से विमुक्त है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१८. हित्वा रतिञ्च अरतिञ्च, सीतिभूतं निरूपधिं।  
सब्बलोकाभिभुं वीरं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो (पंचकामगुणरूपिणी) रति और (अरण्यवास की उत्कंठास्वरूप) अरति को छोड़ कर शांत और क्लेशरहित हो गया है, और जो सारे लोकों को जीत कर वीर (बना) है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४१९. चुतिं यो वेदि सत्तानं, उपपत्तिञ्च सब्बसो।  
असत्तं सुगतं बुद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो सत्त्वों (प्राणियों) की च्युति और उत्पत्ति को पूरी तरह से जानता है, और (जो) अनासक्त, अच्छी गति वाला और बोधिसंपन्न है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४२०. यस्स गतिं न जानन्ति, देवा गन्धब्बमानुसा।  
खीणासवं अरहन्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जिसकी गति देव, गंधर्व और मनुष्य नहीं जानते, और जो क्षीणाश्रव अरहंत है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४२१. यस्स पुरे च पच्छा च, मज्झे च नत्थि किञ्चनं।  
अकिञ्चनं अनादानं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जिसके आगे, पीछे और बीच में कुछ नहीं है अर्थात् जो अतीत, अनागत और वर्तमान की सभी कामनाओं से मुक्त है, जो अकिंचन और अपरिग्रही है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४२२. उसभं पवरं वीरं, महेसिं विजिताविनं।  
अनेजं न्हातकं बुद्धं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो श्रेष्ठ, प्रवर, वीर, महर्षि, विजेता, अकंप्य, स्नातक और बुद्ध है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

४२३. पुब्बेनिवासं यो वेदि, सग्गापायञ्च पस्सति,  
अथो जातिक्खयं पत्तो, अभिञ्जावोसितो मुनि ।  
सब्बवोसितवोसानं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं ॥

जो (अपने) पूर्व-निवास को जानता है, और स्वर्ग तथा नरक को देख लेता है, और फिर जन्म के क्षय को प्राप्त हुआ अपनी अभिज्ञाओं को पूर्ण किया हुआ मुनि है (और) जिसने जो कुछ करना था वह सब कर लिया है, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

ब्राह्मणवग्गो छब्बीसतिमो निट्ठितो ।

एत्तावता सब्बपठमे यमकवग्गे चुद्दस वत्थूनि, अप्पमादवग्गे नव, चित्तवग्गे नव, पुप्फवग्गे द्वादस, बालवग्गे पन्नरस, पण्डितवग्गे एकादस, अरहन्तवग्गे दस, सहस्सवग्गे चुद्दस, पापवग्गे द्वादस, दण्डवग्गे एकादस, जरावग्गे नव, अत्तवग्गे दस, लोकवग्गे एकादस, बुद्धवग्गे नव, सुखवग्गे अट्ठ, पियवग्गे नव, कोधवग्गे अट्ठ, मलवग्गे द्वादस, धम्मट्ठवग्गे दस, मग्गवग्गे द्वादस, पकिण्णकवग्गे नव, निरयवग्गे नव, नागवग्गे अट्ठ, तण्हावग्गे द्वादस, भिक्खुवग्गे द्वादस, ब्राह्मणवग्गे चत्तालीसाति पञ्चाधिकानि तीणि वत्थुसतानि ।

सतेवीसचतुस्सता, चतुसच्चविभाविना ।  
सतत्तयञ्च वत्थूनं, पञ्चाधिकं समुट्ठिताति ॥

## धम्मपदे वग्गानमुद्दानं

यमकप्पमादो चित्तं, पुष्फं बालेन पण्डितो ।  
अरहन्तो सहस्सञ्च, पापं दण्डेन ते दस ॥

जरा अत्ता च लोको च, बुद्धो सुखं पियेन च ।  
कोधो मलञ्च धम्मट्ठो, मग्गवग्गेन वीसति ॥

पक्किण्णं निरयो नागो, तण्हा भिक्खु च ब्राह्मणो ।  
एते छब्बीसति वग्गा, देसितादिच्चबन्धुना ॥

## गाथानमुद्दानं

यमके वीसति गाथा, अप्पमादम्हि द्वादस ।  
एकादस चित्तवग्गे, पुप्फवग्गम्हि सोळस ॥

बाले च सोळस गाथा, पण्डितम्हि चतुद्दस ।  
अरहन्ते दस गाथा, सहस्से होन्ति सोळस ॥

तेरस पापवग्गम्हि, दण्डम्हि दस सत्त च ।  
एकादस जरा वग्गे, अत्तवग्गम्हि ता दस ॥

द्वादस लोकवग्गम्हि, बुद्धवग्गम्हि ठारस ।  
सुखे च पियवग्गे च, गाथायो होन्ति द्वादस ॥

चुद्दस कोधवग्गम्हि, मलवग्गेकवीसति ।  
सत्तरस च धम्मट्टे, मग्गवग्गे सत्तरस ॥

पक्किण्णे सोळस गाथा, निरये नागे च चुद्दस ।  
छब्बीस तण्हावग्गम्हि, तेवीस भिक्खुवग्गिका ॥

एकतालीसगाथायो, ब्राह्मणे वग्गमुत्तमे ।  
गाथासतानि चत्तारि, तेवीस च पुनापरे ।  
धम्मपदे निपातम्हि, देसितादिच्चबन्धुनाति ॥

धम्मपदपाळि निद्धिता ।

## परिशिष्ट-१

‘धम्मपद’ की गाथाओं से मेल खाते विपश्यनाचार्य  
श्री सत्यनारायण गोयन्काजी  
द्वारा विरचित हिंदी/राजस्थानी दोहे

---

गाथा-००४ गाली दी मारा मुझे, हाथ लिया सब लूट।  
ज्यूं ही यह चिंतन छुटे, बैर जायँ सब छूट ॥

गाथा-००५ बैर बैर से ना मिटे, बढ़े द्वेष दुष्कर्म।  
बैर मिटे मैत्री किये, यही सनातन धर्म ॥

गाथा-००८ कम खाणो, कम बोलणो, काया वाणी मौन।  
मार न विचलित कर सकै, ज्यूं परबत नै पौन ॥

गाथा-०११ माने सार असार को, और सार निस्सार।  
कहां मिले उस मूढ़ को, शुद्ध धरम का सार ॥

गाथा-०१२ (१)  
समझ लिया है सार को, छोड़ दिया निस्सार।  
सम्यक द्रष्टा विज्ञजन, वे ही पायें सार ॥

(२)  
जिसने समझा सार को, छोड़ दिया निस्सार।  
सम्यक द्रष्टा विज्ञजन, हुए दुखों के पार ॥

गाथा-०१४ (१)  
ज्यों छायी छत में नहीं, वर्षा-जल घुस पाय।  
त्यों ही संयत चित्त में, राग द्वेष ना आय ॥



(२)

कुटिया छायी जतन से, अब बरसो मेघेश ।  
छायी चित पर धरम छत, होय न राग प्रवेश ॥

गाथा-०१९ कितने फल इस तरु लगे? जाने चौकीदार ।  
केवल गिनती ही गिने, फल न चखे लाचार ॥

गाथा-०२५ प्रलयंकारी बाढ़ में, तू ही तेरा द्वीप ।  
अंधकारमय रात में, तू ही तेरा दीप ॥

गाथा-०४२ जितनी हानि न कर सकें, दुश्मन द्वेषी दोग्य ।  
अधिक हानि निज मन करे, जब मन मैला होय ॥

गाथा-०४३ मां बापू प्रिय बंधुजन, भला करें सब कोय ।  
अधिक भला निज मन करे, जब यह उजला होय ॥

गाथा-०५४ गंध गुलाब वहीं चले, चले पवन जिस ओर ।  
शील गंध बिन पवन के, गमके चारों ओर ॥

गाथा-१०३ रण सहस्र योद्धा लड़े, जीते युद्ध हजार ।  
पर जो जीते स्वयं को, वही शूर सरदार ॥

गाथा-११० सौ वर्षों की जिंदगी, बिना शील दी खोय ।  
शीलवान का एक दिन, सदा श्रेष्ठतर होय ॥

गाथा-१११ सौ वर्षों की जिंदगी, बिन प्रज्ञा दी खोय ।  
प्रज्ञानी का एक दिन, महा मांगलिक होय ॥

गाथा-१२७ सागर तल, पर्वत गुहा, अंतरिक्ष का छोर ।  
पाप फलों से बच सकें, ऐसा दिखे न ठोर ॥

गाथा-१२८ जल में, थल में, गगन में, नहीं सुरक्षित कोय ।  
ऐसा स्थान न जगत में, जहां मरण ना होय ॥

- गाथा-१२९ मत हत्या कर, मार मत, सबको प्यारे प्राण ।  
अपनी सी ही वेदना, सब जीवों की जान ॥
- गाथा-१३० मत पीड़ा, मत त्रास दे, मत हर इनके प्राण ।  
सुख-दुख सबके एक से, सारे जीव समान ॥
- गाथा-१५३ जब जब जन्मा बिन रुके, रहा लगाता दौड़ ।  
कदम कदम बढ़ता रहा, मृत्यु द्वार की ओर ॥
- गाथा-१६५ हम ही अपने कर्म से, होते शुद्ध अशुद्ध ।  
अन्य कौन शोधन करे, देव, ब्रह्म या बुद्ध ॥
- गाथा-१६६ नहीं दोष है स्वार्थ में, सही स्वार्थ ले जान ।  
अपना करे अनर्थ ही, बिना स्वार्थ पहचान ॥
- गाथा-१८३ जीवन भर करते रहें, कुशल कर्म भरपूर ।  
अकुशल से बचते रहें, रहें पाप से दूर ॥
- गाथा-१९७ रहे बैरियों में मगर, चित बैरी ना होय ।  
सबका ही चाहे भला, सच्चा मंगल होय ॥

गाथा-२०४ (१)

परम लाभ 'आरोग्य' है, परम मित्र 'संतोष' ।  
परम बंधु 'विश्वास' है, 'मुक्ति' परम सुख कोष ॥

(२)

नहीं लाभ आरोग्य सम, धन संतुष्टि समान ।  
नहीं बंधु विश्वास सम, सुख सदृश निर्वाण ॥

गाथा-२१५ काम जगै तो भय जगै, जागै मन मँह सोक ।  
काम तज्यां निरभय हुवै, सहजां हुवै निसोक ॥

गाथा-२१६ तृष्णा से दुख जागते, तृष्णा से भय होय ।  
तृष्णा त्यागे दुख मिटे, भय काहे से होय ॥

गाथा-२२३ जीत झूठ को सत्य से, क्रोध जीत अक्रोध ।  
जीत घृणा को प्यार से, मैल चित्त के शोध ॥

गाथा-२४० अपने मन का मैल ही, अपना नाश कराय ।  
ज्यूं लोहे का जंग ही, लोहे को खा जाय ॥

गाथा-२५१ राग सदृश न रोग है, द्वेष सदृश ना दोष ।  
मोह सदृश न मूढ़ता, धरम सदृश न होश ॥

गाथा-२५२ प्रकट करे पर दोष को, ढकता अपने दाग ।  
पर निंदा निज स्तुति निरत, व्याकुल रहे अभाग ॥

गाथा-२७७ सै संस्कार अनित्य है, देख ग्यान सूं देख ।  
प्रग्या सूं देखण लगै, दुख की रवै न रेख ॥

गाथा-२८८ (१)

पूत न रच्छा कर सकै, बाप न सकै बचाय ।  
नूंतो आवै काळ को, कूण सकै सरकाय ॥

(२)

पुत्र न रक्षा कर सके, पिता न माता भ्रात ।  
कौन बचा पाए भला, काल करे जब घात ॥

गाथा-३३८ तृष्णा जड़ से खोद कर, अनासक्त बन जायँ ।  
भव सागर से तरन का, यह ही एक उपाय ॥

गाथा-३५४ (१)

सब दानों से श्रेष्ठ है, धर्म रतन का दान ।  
दायक पाये पुण्य बल, ग्राहक सुख निर्वाण ॥

(२)

धरम दान सब दान मँह, सिरै मोर ही होय ।  
सभी रसां मँह धरम रस, अतुलित हितकर होय ॥

गाथा-३६१ वाणी तो वश में भली, वश में भला शरीर ।  
पर जो मन वश में करे, वही संयमी वीर ॥

गाथा-३६४ सदा सोचिए धर्म ही, सदा बोलिए धर्म ।  
हो शरीर से धर्म ही, यही मुक्ति का मर्म ॥

गाथा-३७३ (१)

शांत चित्त अंतर्मुखी, बैटे शून्यागार ।  
देखत देखत वेदना, दिखे परम सुख सार ॥

(२)

आंख मूंद अन्तरमुखी, बैटे शून्यागार!  
देखत देखत वेदना, मिले सुखों का सार ॥

गाथा-३७४ जहां जहां इस स्कंध में, सम्यक स्मृति जग जाय ।  
वहीं दिखे उत्पाद-व्यय, तो अमृत मिल जाय ॥

गाथा-३९४ जटा जूट माला तिलक, हुए शीश के भार ।  
भेष बदल कर क्या मिला, मन के मैल उतार ॥

# विपश्यना साहित्य

हिंदी

• निर्मल धारा धर्म की - (पांच दिवसीय प्रवचन)	रु. ५५/-
• प्रवचन सारांश (शिविर-प्रवचन)	रु. ४५/-
• जागे पावन प्रेरणा	रु. ८०/-
• जागे अंतर्बोध	रु. ५०/-
• धर्म: आदर्श जीवन का आधार	रु. ४०/-
• तिपिटक में सम्यक संबुद्ध, भाग-२	रु. १३०/-
• धारण करे तो धर्म	रु. ७०/-
• क्या बुद्ध दुःखवादी थे?	रु. ३५/-
• मंगल जगे गृही जीवन में	रु. ४०/-
• धम्मवाणी संग्रह (पालि गाथाएं एवं हिंदी अनु.)	रु. ४०/-
• विपश्यना पगोडा स्मारिका	रु. १००/-
• सुत्तसार भाग १ (दीघ एवं मज्झिम निकाय)	रु. ९५/-
• सुत्तसार भाग २ (संयुत्तनिकाय)	रु. ५०/-
• सुत्तसार भाग ३ (अंगुत्तर एवं खुद्दकनिकाय)	रु. ४५/-
• धन्य बाबा!	रु. ३५/-
• कल्याणमित्र सत्यनारायण गोयन्का (व्यक्तित्व और कृतित्व)	रु. ५०/-
• पातंजल योगसूत्र	रु. ५०/-
• आहुनेय्य, पाहुनेय्य, अंजलिकरणीय - डॉ. ओम प्रकाश जी	रु. ३०/-
• राजधर्म [कुछ ऐतिहासिक प्रसंग]	रु. ३५/-
• आत्म-कथन भाग-१	रु. ३५/-
• लोक गुरु बुद्ध	रु. १०/-
• देश की वाह्य सुरक्षा	रु. ०५/-
• गणराज्य की सुरक्षा कैसे हो!	रु. ०६/-
• शाक्यों और कौलियों के गणतंत्र का विनाश क्यों हुआ?	रु. १०/-
• अंगुत्तर निकाय, भाग-१	रु. १००/-
• केंद्रीय कारागृह जयपुर, विपश्यना का प्रथम जेल शिविर	रु. ३०/-
• विपश्यना : लोकमत भाग-१	रु. ५५/-
• विपश्यना : लोकमत भाग-२	रु. ४५/-
• अग्रपाल राजवैद्य जीवक	रु. २०/-
• मंगल हुआ प्रभात (हिंदी दोहे)	रु. ५५/-
• पथ-प्रदर्शिका	रु. २/-
• विपश्यना क्यों?	रु. १/-
• सम्राट अशोक के अभिलेख	रु. ५०/-
• आचार्य श्री सत्यनारायणजी गोयन्का का संक्षिप्त जीवन-परिचय	रु. २०/-
• अहिंसा किसे कहें?	रु. १५/-
• लकुण्डक भद्रिय	रु. १०/-
• गौतम बुद्ध: जीवन-परिचय और शिक्षा	रु. २५/-
• भगवान बुद्ध की साम्प्रदायिकता-विहीन शिक्षा	रु. १०/-
• बुद्ध-जीवन-चित्रावली	रु. ३३०/-
• भगवान बुद्ध के अग्रश्रावक महामोग्गल्लान	रु. ३५/-
• क्या बुद्ध नास्तिक थे?	रु. ८५/-
• तिपिटक में सम्यक संबुद्ध, (६ भागों में) भाग-१ रु. ४५/-, भाग-२ रु. ५०/-, भाग-३ रु. ५५/-, भाग-४ रु. ४५/-, भाग-५ रु. ४५/-, भाग-६ रु. ५५/-	
• महामानव बुद्ध की महान विद्या विपश्यना का उद्गम और विकास (११६ चित्रों का संग्रह) सजिल्द	रु. ६२५/-
• भगवान बुद्ध के महाश्रावक महाकस्सप (धुतांगधारियों में 'अग्र')	रु. ४०/-
• महामानव बुद्ध की महान विद्या विपश्यना का उद्गम और विकास	रु. १४५/-
• भगवान बुद्ध के अग्रउपासक अनाथपिण्डिक	रु. ५०/-
• भगवान बुद्ध की अग्रश्राविका किसागोतमी	रु. ३०/-
• चित्त गृहपति एवं हत्यक आळवक	रु. ३०/-
• खुशियों की राह	रु. १५०/-
• विसाखा मिगारमाता	रु. ३५/-
• मगधराज सेनिय विम्बिसार	रु. ४५/-
• बुद्धसहस्रनामावली (पालि एवं हिंदी)	रु. ३५/-
• आनन्द - भगवान बुद्ध के उपस्थाक	रु. १२०/-
• जीने की कला	रु. ७०/-
• परम तपस्वी श्री रामसिंह जी	रु. ५५/-
• भगवान बुद्ध की अग्रउपासिकाएं खुज्जुतरा एवं सामावती तथा उत्तरानन्दमाता	रु. २५/-
• विपश्यना पत्रिका संग्रह भाग - १	रु. ८०/-
• विपश्यना पत्रिका संग्रह भाग - २	रु. ७५/-
• आदर्श दंपति नकुलपिता एवं नकुलमाता	रु. २५/-

• तिक-पट्टान (संक्षिप्त रूपरेखा)	रु. ३५/-
• १२ हिंदी पुस्तिकाओं का सेट	रु. १४/-
• धम्म-वंदना (पालि गाथाएं, हिंदी अनुवाद)	रु. ४५/-
• धम्मपद (संशोधित हिंदी अनुवाद सहित)	रु. ४५/-
• महासतिपट्टानसुत्त (समीक्षा एवं भाषानुवाद)	रु. ५५/-
• महासतिपट्टानसुत्त (भाषानुवाद)	रु. ३५/-
• बुद्धगुणगाथावली (पालि)	रु. ३०/-
• बुद्धसहस्रनामावली (पालि)	रु. १५/-
• प्रारंभिक पालि	रु. ८५/-
• प्रारंभिक पालि की कुंजी	रु. ५०/-
• जागो लोगां जगत रा (राजस्थानी दूहा)	रु. ४५/-
• परिभाषा धर्म री (राजस्थानी)	रु. १०/-
• ५ राजस्थानी पुस्तिकाओं का सेट	रु. ५/-
• विश्व विपश्यना स्तूप का संदेश (हिंदी, मराठी, अंग्रेजी)	रु. १०/-

## मराठी

• जगण्याची कला	रु. ७०/-
• जागे पावन प्रेरणा	रु. ८०/-
• प्रवचन सारांश	रु. ४०/-
• धर्म: आदर्श जीवनाचा आधार	रु. ४०/-
• जागे अंतर्बोध	रु. ६५/-
• निर्मळ धारा धर्माची	रु. ४५/-
• महासतिपट्टानसुत्त (भाषानुवाद)	रु. ३०/-
• महासतिपट्टानसुत्त (समीक्षा)	रु. ४०/-
• मंगलमय गृहस्थ-जीवन	रु. ३५/-
• भगवान बुद्धाची सांप्रदायिकता-विहीन शिकवणुक	रु. १०/-
• बुद्धजीवन-चित्रावली	रु. ३३०/-
• आनंदाच्या वाटेवर	रु. १५०/-
• आत्म-कथन भाग-१	रु. ५०/-
• अग्रपाल राजविद्य जीवक	रु. २०/-
• महामानव बुद्धाची महान विद्या विपश्यना: उगम आणि विकास	रु. १२५/-
• लोक गुरु बुद्ध	रु. ०६/-
• लकुण्डक भद्रिय	रु. १२/-
• प्रमुख विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायणजी गोयंका यांचा संक्षिप्त जीवन-परिचय	रु. १८/-

## गुजराती

• प्रवचन सारांश	रु. ४५/-
• धर्म: आदर्श जीवनનો आधार	रु. ४५/-
• महासतिपट्टानसुत्त	रु. २०/-
• जागे अंतर्बोध	रु. ७५/-
• धारण करे तो धर्म	रु. ७०/-
• जागे पावन प्रेरणा	रु. १००/-
• क्या बुद्ध दुःखवादी थे ?	रु. ३०/-
• विपश्यना शा माटे ? (पुस्तिका)	रु. ०२/-
• मंगल जगे गृही जीवन में	रु. ३५/-
• निर्मळ धारा धर्म की	रु. ६५/-
• बुद्धजीवन-चित्रावली	रु. ३३०/-
• लोक गुरु बुद्ध	रु. ०६/-
• भगवान बुद्ध की साम्प्रदायिकता-विहीन शिक्षा	रु. १०/-

## अन्य भाषाओं में

• द आर्ट ऑफ लिविंग (तमिळ)	रु. ६०/-
• डिस्कोर्स समरीज (तमिळ)	रु. ३०/-
• ग्रेसियस फ्लो ऑफ धम्म (तमिळ)	रु. २५/-
• मंगल जगे गृही जीवन में (तेलुगु)	रु. ३०/-
• प्रवचन सारांश (बंगाली)	रु. ३५/-
• धर्म: आदर्श जीवन का आधार (बंगाली)	रु. ३०/-
• महासतिपट्टानसुत्त (बंगाली)	रु. ९०/-
• प्रवचन सारांश (मलयालम)	रु. ४५/-
• निर्मळ धारा धर्म की (मलयालम)	रु. ४५/-
• जीने का हुनर (उर्दू)	रु. ७५/-
• धर्म: आदर्श जीवन का आधार (पंजाबी)	रु. ५०/-

## पालि तिपिटक सेट:

अङ्गुत्तरनिकाय (अजिल्द) (१२ ग्रंथ)	रु. १५००/-
खुद्दकनिकाय - सेट १ (९ ग्रंथ)	रु. ५४००/-
दीघनिकाय अभिनवटीका (रोमन) (भाग १ और २)	रु. १०००/-

## English Publications

• Sayagi U Ba Khin Journal	Rs. 225/-	• Key to Pali Primer	Rs. 55/-
• Essence of Tipitaka by U Ko Lay	Rs. 130/-	• Guidelines for the Practice of Vipassana	Rs. 2/-
• The Art of Living by Bill Hart	Rs. 85/-	• Vipassana In Government	Rs. 1/-
• The Discourse Summaries	Rs. 60/-	• The Caravan of Dhamma	Rs. 90/-
• Healing the Healer by Dr. Paul Fleischman	Rs. 35/-	• Peace Within Oneself	Rs. 10/-
• Come People of the World	Rs. 40/-	• The Global Pagoda Souvenir 29 Oct.2006 (English & Hindi)	Rs. 60/-
• Gotama the Buddha: His Life and His Teaching	Rs. 45/-	• The Gem Set In Gold	Rs. 75/-
• The Gracious Flow of Dharma	Rs. 40/-	• The Buddha's Non-Sectarian Teaching	Rs. 15/-
• Discourses on Satipaṭṭhāna Sutta	Rs. 80/-	• Acharya S. N. Goenka An Introduction	Rs. 25/-
• The Wheel of Dhamma Rotates	Rs. 850/-	• Value Inculcation through Self-Observation	Rs. 35/-
• Vipassana : Its Relevance to the Present World	Rs. 110/-	• Glimpses of the Buddha's Life	Rs. 330/-
• Dharma: Its True Nature	Rs. 70/-	• Pilgrimage to the Sacred Land of Dhamma (Hard Bound)	Rs. 750/-
• Vipassana : Addictions & Health (Seminar 1989)	Rs. 70/-	• An Ancient Path	Rs. 100/-
• The Importance of Vedanā and Sampajañña	Rs. 135/-	• Vipassana Meditation and the Scientific World View	Rs. 15/-
• Pagoda Seminar, Oct. 1997	Rs. 80/-	• Path of Joy	Rs. 200/-
• Pagoda Souvenir, Oct. 1997	Rs. 50/-	• The Great Buddha's Noble Teachings The Origin & Spread of Vipassana (Small)	Rs. 160/-
• A Re-appraisal of Patanjali's Yoga- Sutra by S. N. Tandon	Rs. 85/-	• Vipassana Meditation and Its Relevance to the World (Coffee Table Book)	Rs. 800/-
• The Manuals Of Dhamma by Ven. Ledi Sayadaw	Rs. 205/-	• The Great Buddha's Noble Teachings The Origin & Spread of Vipassana (HB)	Rs. 650/-
• Was the Buddha a Pessimist?	Rs. 65/-	• Buddhagunāgāthāvalī (in three scripts)	Rs. 30/-
• Psychological Effects of Vipassana on Tihar Jail Inmates	Rs. 80/-	• Buddhasahasannāmaṅgalī (in seven scripts)	Rs. 15/-
• Effect of Vipassana Meditation on Quality of Life (Tihar Jail)	Rs. 60/-	• English Pamphlets, Set of 9	Rs. 11/-
• For the Benefit of Many	Rs. 160/-	• Set of 10 Post Card	Rs. 35/-
• Manual of Vipassana Meditation	Rs. 80/-	• Gotama the Buddha: His Life and His Teaching (French)	Rs. 50/-
• Realising Change	Rs. 140/-	• Meditation Now: Inner Peace through Inner Wisdom (French)	Rs. 80/-
• The Clock of Vipassana Has Struck	Rs. 130/-	• For the Benefit of Many (French)	Rs. 195/-
• Meditation Now : Inner Peace through Inner Wisdom	Rs. 85/-	• For the Benefit of Many (Spanish)	Rs. 125/-
• S. N. Goenka at the United Nations	Rs. 20/-	• The Art of Living (Spanish)	Rs. 130/-
• Defence Against External Invasion	Rs. 10/-	• Path of Joy (German, Italian, Spanish, French)	Rs. 300/-
• How to Defend the Republic?	Rs. 6/-		
• Why Was the Sakyan Republic Destroyed?	Rs. 12/-		
• Mahāsatiṭṭhāna Sutta	Rs. 65/-		
• Pali Primer	Rs. 95/-		

संपर्क: विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, जि. नाशिक, महाराष्ट्र. फोन: ०२५५३-२४४०७६, २४४०८६, २४३७१२, २४३२३८. फैक्स: ०२५५३-२४४१७६. (दक्षिण भारतीय भाषाओं में अनुवादित विपश्यना साहित्य, स्थानीय केंद्रों पर उपलब्ध है) Email: vri\_admin@dhamma.net.in; **विपश्यना विशोधन विन्यास के प्रकाशन अब ऑनलाइन भी खरीदे जा सकते हैं। कृपया देखें [www.vridhamma.org](http://www.vridhamma.org)**

## विपश्यना साधना केंद्र

विश्वभर में विपश्यना के निम्नलिखित केंद्र हैं। इन केंद्रों पर प्रायः हर माह दस दिवसीय आवासीय शिविर आयोजित होते हैं। इच्छुक व्यक्ति किसी भी केंद्र से भावी शिविर-कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्त करके, अपनी सुविधानुसार सम्मिलित हो सकते हैं: -

**प्रमुख केंद्र = धम्मगिरि, धम्मतपोवन :** विपश्यना विश्व विद्यापीठ, इगतपुरी-४२२४०३, नाशिक. फोन: [९१] (०२५५३) २४४०७६, २४४०८६, २४३७१२, २४३२३८; फ़ैक्स: ०२५५३-२४४१७६. Website: www.vri.dhamma.org, Email: <info@giri.dhamma.org> (केवल कार्यालय के समय अर्थात् सुबह १० बजे से सायं ५ बजे तक).

**धम्मनासिका: संपर्क:** १) नाशिक विपश्यना केंद्र, म.न.पा. जलशुद्धिकरण केंद्र के सामने, शिवाजीनगर, सातपुर, (पोस्ट-YCMOU), नाशिक-४२२२२२. संपर्क: फोन: (०२५३) ६५१६-२४२, ३२०३-६७७, मोबाइल: ९८२२५-१३२४४, Email: info@nasika.dhamma.org

**धम्मसरिता: विपश्यना केंद्र,** जीवन संध्या मंगल संस्थान, मातोश्री वृद्धाश्रम, सौरगांव, पोस्ट पडघा, ता. भिवंडी, जि. ठाणे-४२११०१ (खडावली मध्य रेल्वे स्टेशन के पास). फोन: (०२५२२) ६९५३०१, संपर्क: +९१ ७७९८३-२४६५९, ७७९८३-२५०८६.

**धम्ममनमोद:** मनमाड विपश्यना केंद्र, अनकाई किला स्टेशन के पास, पो. अनकाई, ता. येवला, जि. नाशिक-४२२ ४०३ संपर्क: (०२५९१) २२५१४१-२३१४१४.

**धम्मवाहिनी:** मुंबई परिसर विपश्यना केंद्र, गांव रुंदे, टिटवाला (पूर्व) कल्याण, जि. ठाणे. संपर्क: संपर्क: मोबाइल: ९७७३०-६९९७८. केवल कार्यालय के दिन- १२ से सायं ६ तक.

**धम्मसाकेत:** विपश्यना केंद्र, नालंदा स्कूल के पास, कानसई रोड, सुभाष टेकडी, उल्हासनगर-४२१००४, जि. ठाणे, महाराष्ट्र

**धम्मविपुल:** विपश्यना साधना केंद्र, सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट, प्लॉट नं. ९१ए; सेक्टर २६, पारासिक हिल, सीबीडी बेलपुर, नवी मुंबई ४०० ६१४. फोन: (०२२) २७५२-२२७७. Email: dhammavipula@gmail.com

**धम्मपत्तन:** एस्सेल वर्ल्ड के पास, गोर्राई खाडी, बोरीवली (पश्चिम) मुंबई - ४०० ०९१ व्यवस्थापक, फोन: (९१) (०२२) २८४५-२२३८, ३३७४-७५०१, मोबा. ९७७३०-६९९७५, (सुबह ११ से सायं ५ बजे तक); टेलि-फैक्स: (०२२) ३३७४-७५३१, Email: info@pattana.dhamma.org; Website: www.pattana.dhamma.org

**धम्मसरोवर:** खान्देश विपश्यना केंद्र, गेट नं. १६६, डेडरगांव जलशुद्धिकरण केंद्र के पास, मु.पो. तिखी-४२४ ००२, जिला- धुळे, (०२५६२) २०३४८२, ६९९५७३. मोबा. ९२२५४-६१०२१. संपर्क: फोन: २२२८६१, मोबा. ९९२२६-०७७१८, ९४०३४-२४३३३, ९४२२७-७७९०२. Email: info@sarovara.dhamma.org

**धम्मनानंद:** पुणे विपश्यना केंद्र, मरकल गांव के पास, आलंदी से ८ कि.मी. मोबा. कार्यालय ९२७१३-३५६६८. व्यवस्थापक मोबा. ९४२०४-८२८०५. संपर्क: पुणे विपश्यना समिति, नेहरू स्टेडियम के सामने, आनंद मंगल कार्यालय के पास, दादावाडी, पुणे-४११००२. फोन: (०२०) २४४६८९०३, २४४३६२५०; टेलि/फैक्स: २४४६४२४३. Email: info@ananda.dhamma.org Website: www.pune.dhamma.org;

**धम्मपुण्य:** संपर्क: पुणे विपश्यना समिति, दादावाडी, नेहरू स्टेडियम के सामने, आनंद मंगल कार्यालय के पास, पुणे-४११००२. फोन: (०२०) २४४३६२५०. २४४६८९०३. फैक्स: २४४६४२४३; Email: info@punna.dhamma.org

**धम्मालय:** दक्खिन विपश्यना अनुसंधान केंद्र, रामलिंग रोड, आलते पार्क, आलते, ता. हातकणंगले, जि. कोल्हापुर, पिन: ४१६१२३. फोन: ०२३०-२४८७१६७, २४८७३८३, Email: info@alaya.dhamma.org. संपर्क: कार्यालय: २१०१/१९ इ, जयहिंद अपार्टमेंट, लक्ष्मीनगर, कोल्हापुर-४१६००५, फोन:(२३१) २५३०९९९, मोबा. ९७६७४-१३२३२.

**धम्मअनाकुल:** विपश्यना साधना केंद्र, खापरखेड फाटा, तेल्लारा-४४४१०८ जि. अकोला. संपर्क: १) विपश्यना चैरिटेबल ट्रस्ट, शेगांव, अपना बाजार, मेन रोड, शेगांव, जि. बुलडाना. फोन: ९५७९८-६७८९०, ९८८१२-०४१२५. २) श्री महेंद्र सिंह आनंद, मोबाइल: ९४२२१-८१९७०. Email: info@anakula.dhamma.org

**धम्मअजय:** विपश्यना साधना केंद्र, ग्राम - अजयपूर, पो. चिचपल्ली, मुल रोड, चंद्रपुर, Email: dhammaajaya@gmail.com संपर्क: १) श्री घडडे, सुगत नगर, नगीनाबाग वार्ड नं. २ जि. चंद्रपुर पिन-४४२४०१. मोबाइल: ८००७१५१०५०, ९४२१७-२१००६, २) श्री प्रीतिकमल पाटील, मोबाइल: ९४२१७-२१००६, ९८२२५-७०४३५, ९३७०३१२६७३,

**धम्ममल्ल:** संपर्क: श्री. शेलके, सिद्धार्थ सोसायटी, यवतमाल, ४४५००१, फोन: ९४२२८-६५६६१.

**धम्मभूसन:** विपश्यना साधना समिति, शांतिनगर, ओमकार कॉलोनी, कोटेचा हायस्कूल के पास, जि. जलगांव, भुसावल ४२५२०१, Email: info@bhusana.dhamma.org, संपर्क: मोबा. ९८२२९-१४०५६.

**धम्मअजन्ता:** अजंता अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना समिति, एम. जी. एम. मेडिकल कालेज कैम्पस, एन-६, सिडको, औरंगाबाद-४३१००३. फोन: (०२४०) २३५००९२, २४८०१९४. Email: vipassana@emgm.org संपर्क: १) श्री रायबोले, फोन: (०२४०) २३४१८३६. २) श्री के. एन. पटेल, फोन: (निवास) (०२४०) २३५४२२३, (कार्या.) २३३३१३६. मोबाइल: ९४२२२-११३४४.

**धम्मनाग:** नागपुर विपश्यना केंद्र- माहुइरगाँव गांव, नागपुर-कलमेश्वर रोड के पास, नागपुर; संपर्क: फोन: ०७१२-२४८६८६, २४२०२६१, मोबा. ९४२३४-०५६००; फ़ैक्स: २५३९७१६. Email: info@naga.dhamma.org

**धम्मसुगति:** संपर्क: १) श्री नारनवरे, एकायनो मग्नो धम्म प्रशिक्षण संस्था, सुगतनगर, नागपुर-१४. फोन: (०७१२) २६३०११५, फ़ैक्स: २६५०८६७. मोबा. ९४२२१-२९२२९. २) सुरेंद्र राऊत: २६३२९१८. मोबा. ९२२६९-९६०८७.

**धम्मवसुधा:** विपश्यना केंद्र, हिवरा पोस्ट झडशी, ता. सेलु, जि. वर्धा संपर्क: १) श्री एवं सौ बांते, मोबा. ९३२६७३२५५०, ९३२६७३२५४७. २) श्री काटवे, मोबा. ९७३००६९७२६, Email: dhammavasudha@yahoo.com.in



**धम्म छत्तपति:** फलटन, सातारा, महाराष्ट्र

**धम्म आवास:** लातूर विपश्यना समीची, आर. टी. ओ. आफिस के पास, वसंत विहार कालोनी, बाभळगाव रोड, लातूर-४१३५३१ **संपर्क:** १) श्री द्वारकादास भुतडा, मोबा. ९६७३२५९९००, ०२३८२-२५९२८४, २) श्री आकाश कामदार, मोबा. ९९७०२-७७७०१.

**धम्म निरंजन:** विपश्यना साधना केंद्र, नेरली कुशता धाम नेरली. (नांदेड से ५ कि.मी. की दुरी पर) **संपर्क:** १) श्री एस. एम. जॉधले, मोबाइल: ९४२२१८९३१८. २) डॉ. कुलकर्णी, फोन: (०२४६२) २५२६५९. मोबाइल: ९४२२१७३२०२.

**धम्मथली:** विपश्यना केंद्र, पो.वां. २०८, जयपुर-३०२००१, राजस्थान, फोन: [९१] ०१४१-२६८०२२०, मोबा. ०-९६१०४-०१४०१, ०९६०२८-४८८९६. फैक्स: २५७६२८३. Email: info@thali.dhamma.org

**धम्ममरुधरा:** विपश्यना साधना केंद्र, लहरिया रिसोर्ट के पीछे, पाल-चौपासनी लींक रोड, चोखा, जोधपुर-३४२००९. मोबा. +९१-९३१४७२७२१५, +९१-९८२८१३११२०, फैक्स: +९१-२९१-२७४६४३५. Email: info@marudhara.dhamma.org **संपर्क:** श्री नेमीचंद भंडारी, ४१, अशोक नगर, पाल लींक रोड, जोधपुर-३४२००३. मोबा.: +९१-९८२९०२७६२१,

**धम्मपुब्बज:** चूरू (राजस्थान) पुब्बज भुमी विपश्यना ट्रस्ट, बलेरी रोड, (चूरू से ६ कि.मी.) चूरू (राजस्थान): **संपर्क:** १) श्री श्रवण कुमार फुलवारी, सी-८६, सामुदायिक भवन के पास अग्रसेन नगर, चूरू, मोबा. ०९४१४६-७६०६१. Email: gk.churu@gmail.com २) श्री सुरेश खन्ना, ६५ इंदिरा कालोनी, वनी पार्क, जयपुर, मोबा. ९४१३१-५७-५६. Email: sureshkhanna56@yahoo.com

**धम्मअजरामार:** विपश्यना केंद्र, वीर तेजाजी नगर, दौराई, अजमेर-३०५००३; फोन: (०१४५) २४४३६०४. **संपर्क:** श्री कैलाश बैरवाल, मोबा. ९४१३२२८३४०, ९४६१५६१३४४, ९००११९६५५६. Email: kailashbairwal@yahoo.com

**धम्मपुष्कर:** विपश्यना केंद्र, ग्राम रेवत (केडेल), पुष्कर पर्वतसर रोड, पुष्कर, जि अजमेर. मोबा. +९१-९४१३३३-०७५७०. फोन: +९१-१४५-२७८०५७०. **संपर्क:** १) श्री रवि तोपणीवाल, मोबा. ०९८२९०-७१७७८. Email: info@toscon.com २) श्री अनिल धारीवाल, मोबा. ०९८२९०-२८२७५. फैक्स: ०१४५-२७८७१३१.

**धम्मसोत:** विपश्यना साधना संस्थान, राहका गांव, (निम्मोद पोलीस पोस्ट के पास) बल्लभगढ़-सोहना रोड, (सोहना से १२ कि.मी.), जिला- गुडगांव, सोहना, हरियाणा. मोबा. ९८१२६५५५९९, ९८१२६४१४००. (बल्लभगढ़ और सोहना से बस उपलब्ध है।) **संपर्क:** विपश्यना साधना संस्थान, रुम न. १०१५, १० वां तल, हेमकुट/मोदी टावर्स, ९८ नेहरू प्लेस, नई दिल्ली-११००१९. फोन: (०११) २६४८-५०७१, २६४८-५०७२, २६४५-२७७२. फैक्स: २६४७०६५८. Email: info@sota.dhamma.org

**धम्मपट्टान :** विपश्यना साधना केंद्र, कम्मासपुर, जि. सोनीपत, हरियाणा, पिन-१३१००१. मोबा. ०९९९१८७४५२४, **संपर्क:** ऊपर धम्मसोत के संपर्क पर.

**धम्मकारुणिक:** विपश्यना साधना संस्थान, गव्हरमेंट स्कूल के पास, गाँव नेवल, डाक सैनिक स्कूल कुंजपुरा, करनाल-१३२००१; **संपर्क:** श्री वर्मा, ५, शक्ति कालोनी, एस.वी.आई. के पास, करनाल-१३२००१. टेली-फैक्स: ०१८४-२२५७५४३, २२५७५४४; मोबा. ९९९२०-००६०१. Email: info@karunika.dhamma.org;

**धम्म हितकारी:** रोहतक, हरियाणा

**धम्मसिखर:** हिमाचल विपश्यना केंद्र, धर्मकोट, मैकलोडगंज, धर्मशाला, जिला- कांगरा, पिन-१७६२१९ (हि. प्र.) फोन: ०१८९२- २२१३०९, २२१३६८. मोबा. (सायं ४ से ५) ०९८५७०-१४०५१. Email: info@sikhara.dhamma.org;

**धम्मसलिल:** देहरादून विपश्यना केंद्र, जनतनवाला गांव, देहरादून कॅन्ट तथा संतला देवी मंदिर के पास, देहरादून-२४८००१. फोन: ०१३५२-१०४५५५, २७१५१८९. **संपर्क:** १) श्री भंडारी, १६ टैगोर विला, चक्राता रोड, देहरादून-२४८००१. फोन: (०१३५) २७१५१८९, फैक्स: २७१५५८०. २) श्री गुप्ता, फोन: २६५३३६६. Email: info@salila.dhamma.org;

**धम्मसुवत्थी:** जेतवन विपश्यना साधना केंद्र: कटरा बाईपास रोड, बुद्धा इंटर कालेज के सामने, श्रावस्ती, पिन-२७१८४५; फोन: (०५२५२) २६५४३९, ०९३३५८३३३७५ Email: info@suvatthi.dhamma.org **संपर्क:** श्री मुग्ली मनोहर, मातन हेलीया. मोबाईल: ०९४१५०-३६८९६, ०९४१५७-५१०५३.

**धम्मलक्खण:** लखनऊ विपश्यना केंद्र, अस्ती रोड, बक्शी का तालाब, लखनऊ-२२७२०२. फोन: (०५२२) २९६८५२५. मोबा. ०९७९४५४५३३४. Email: info@lakkhana.dhamma.org **संपर्क:** १) श्री जैन, ए-१०१, हेम्टन कोर्ट्स अपार्टमेंट्स, पिकेटडिली होटल के पीछे, आलमबाग, लखनऊ-२२६ ००५, (उ.प्र.) फोन: नि. (०५२२)-२४२-४४०८, मोबा. ०९३३५९-०६३४१, ०९४१५०-३६८९६, ०९४१५७-५१०५३.

**धम्मधन:** पंजाब विपश्यना केंद्र, आनंदगढ़, पो. मेहलांवली-१४६११०, जिला- होशियारपुर. फोन: ०१८८२-२७२३३३, मोबाइल: ९४६५१-४३४८८. Email: info@dhaja.dhamma.org

**धम्म तिहार:** नई दिल्ली जेल न. ४ तिहार, केन्द्रीय कारागृह, नई दिल्ली

**धम्म रक्खक:** नई दिल्ली नजफगढ़, पुलिस ट्रेनिंग कालेज

**धम्मचक्क:** विपश्यना साधना केंद्र, खरगीपुर गांव, पो. पियरी, चौबेपुर, (सारनाथ), वाराणसी. मोबा: ०९३०७०९३४८५, Email: info@cakka.dhamma.org **संपर्क:** १) श्री गुप्ता, फोन: ०५४२-३२४६०८९. मोबा. ९३३६९-१४८४३, (प्रातः १० से सायं ६.) २) श्री प्रेम श्रीवास्तव, मोबाईल: ९२३५४-४१९८३.

**धम्मकल्याण:** कानपुर (उ. प्र.) अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना साधना केंद्र, ढोड़ी घाट, हनुमान मंदिर के पास, गाँव एमा, पो. रूमा, कानपुर नगर- २०९४०२, (सेन्ट्रल रेलवे स्टेशन से २३ कि० मी० एवं रमादेवी चौराहा से १५ कि० मी० दूरी पर स्थित) फोन: ०७३८८-५४३७९३, ०७३८८-५४३७९५, मोबा. ०८९९५४८०१४९. Email: dhamma.kalyana@gmail.com, **संपर्क:** १) श्री अशोक साहू, मोबा. ०९८३९१-३८०८४, २) डा. ओ. पी गुप्ता, मोबा. ०९४५०१-३२४३६.

**धम्मसिन्धु:** कच्छ विपश्यना केंद्र, ग्राम- बाड़ा, मांडवी, जिला- कच्छ-३७०४७५. फोन: (कार्या.) (०२८३४) २७३३०३,

फैक्स: २२४४८८, २८८९११; संपर्क: फोन: (०२८३४) २२३०७६, २२३४०६, Email: info@sindhu.dhamma.org

**धम्मकोट : सौराष्ट्र विपश्यना केंद्र**, कोठारिया रोड, लोथडा गांव, राजकोट, गुजरात. फोन: ०२८१-२७८२०४०, मोबाईल: ९३२७९-२३५४० (राजकोट से १५ कि.मी.) संपर्क: फोन: ०२८१-२२२०८६१६, मोबाईल: ९४२७२-२१५९१, फैक्स: २२२१३८४. Email: info@kota.dhamma.org

**धम्मदिवाकर: उत्तर गुजरात विपश्यना केंद्र**, मीडा गांव, ता. और जिला- मेहसाणा, गुजरात; फोन: (०२७६२) २७२८००. Email: info@divakara.dhamma.org संपर्क: फोन: (०२७६२) २५४६३४, २५३३१५. मोबा. ०९४२९२३३०००,

**धम्मसुरिन्द्र:** सुरेंद्रनगर, गुजरात संपर्क: १) महासतीजी, फोन: (०२७५२) २४२०३०. २) डॉ. वविशी, फोन: २३२५६४.

**धम्मभवन:** संपर्क: १) 'धम्मभवन', ५ कालिंदी पार्क, अकोटा अतिथिगृह के पीछे, अकोटा, बड़ोदा-३९००२०; फोन: (०२६६५) २३४११८१. २) विट्ठलभाई पटेल, फोन: (०२६९२) मोबा. ९८२५०-२८०५७. Email: vvsou@hotmail.com

**धम्म अम्बिका :** विपश्यना ध्यान केंद्र, (१५ कि० मी० नवसारी तथा बिलीमोरा रेलवे स्टेशन) १) जी एल/१२ निलंजन काम्प्लेक्स, राधा किशन मंदिर के सामने, नूतन सोसायटी के पास, महर्षि अरविंद मार्ग दुधिया तलाव, नवसारी, २) श्री रत्नशीभाई के. पटेल, मोबा. ०९८२५०४४५३६, ३) श्री मोहनभाई पटेल, मोबा. ०९५३७२६६९०९.

**धम्मपीठ: गुर्जर विपश्यना केंद्र**, ग्राम- रनोडा, ता. धोलका, जिला- अहमदाबाद- ३८७८१०, मोबा. ८९८००-०१११०, ८९८००-०१११२, ९४२६४-१९३९७. फोन: (०२७१४) २९४६९०. संपर्क: श्रीमती शशी तोडी, मोबा. ९८२४०-६५६६८. Email: info@pitha.dhamma.org

**धम्मखेत:** विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केंद्र, (१२.६ किमी.) माइल स्टोन नागार्जुन सागर रोड, कुसुम नगर, वनस्थलीपुरम हैदराबाद-५०००७०, (आंध्र प्रदेश) फोन: (०४०) २४२४०२९०, ३२४६०७६२, ०९४९१५९४२४७, फैक्स: २४२४१७४६. Email: info@khetta.dhamma.org

**धम्मसेतु: विपश्यना साधना केंद्र**, ५३३, पझान- थंडलम रोड, थीरुनीरमलाई रोड, द्वारा, थीरुमुदीवक्कम, चेन्नई-६०००४४. फोन: ०४४-२४७८०९५३, २४७८०९५२, मोबाइल: ९४४४०-२१६२२, संपर्क: फोन: ०४४-४३४०-७०००, ४३४०-७००१, फैक्स: ९१-४४-४२०१-११७७. मोबा. ०९८४०७-५५५५५. Email: setu.dhamma@gmail.com;

**धम्मपफुल्ल: बैंगलोर विपश्यना केंद्र**, अलूर-५६२१२३. (गाँव अलूर, अलूर पंचायत कार्यालय के पास) तुमकूर हाईवे के सामने दासनपुरा बैंगलोर उत्तर तालुका, (कर्नाटक). फोन: (०८०) २३७१-२३७७, २३७१७१०६, ९१-९७३९५९१५८० (सुबह १० से सायं ६ तक), ९४२३-५७४२४ (सुबह ९ से दोपहर २ तथा सायं ४ से ६ तक), एवं ९४४३५-४५३८८ (सुबह ११ से दोपहर ३ तक) Email: info@paphulla.dhamma.org [बैंगलोर रेलवे स्टेशन से २३ की.मी. दूर; मजेस्टिक बस स्टैंड के प्लेटफार्म २० से नं. २५६, २५८, २५८सी, २५८ के बस से तुमकूर हाईवे पर हिमालया ड्रग भवन तक, तथा वहां से अलूर गांव के लिए ऑटोरिक्षा मिलते हैं।]

**धम्मनागाजुन : विपश्यना साधना केंद्र**, हिल कॉलोनी, नागार्जुन सागर, जि. नालगोंडा, आंध्र प्रदेश, (हैदराबाद से १४०.४ किमी, बुद्धपार्क के पास, हिल कॉलोनी से हैदराबाद की तरफ ३ किमी, दूरी पर) पिन-५०८२०२. फोन: (८६८०) २७७९९९ मोबा: ०९९६३७७५६४५, ९४४०१- ३९३२९. Email: info@nagajuna.dhamma.org

**धम्मनिज्जान : विपश्यना साधना केंद्र**, इंदूर, पो. पोचाराम-५०३१८६, येदपल्ली मंडल, जि. निजामाबाद, फोन: (०८४६७) ३१६६६३, ९९०८५९६३३६. Email: info@nijhana.dhamma.org

**धम्मविजय : विपश्यना साधना केंद्र**, विजयराय, पोस्ट- पेदावेगी मंडलम्, पिन-५३४४७५, जि. पश्चिम गोदावरी, (आंध्र प्रदेश). [विजयराय गांव एलुरु से १५ किमी, एलुरु चिंतलपुडी रोड पर. विजयराय बस स्टैंड से ३ की. मी. दूरी पर धम्मविजया सेंटर हैं, बस स्टैंड से अटो/टैक्सी उपलब्ध हैं।] फोन: (०८८१२) २२५५२२; मोबा. ९४४१४-४९०४४

**धम्मराम: विपश्यना अंतर्राष्ट्रीय साधना केंद्र**, कुमुदावल्ली गांव, भीमावरम-भानुकु रोड, (भीमावरम के पास), मंडल -पाल कोडेरु, जि. पश्चिम गोदावरी, पिन-५३४२१०. फोन: ०८८१६- २३६५६६. Email: info@rama.dhamma.org

**धम्म कोण्डञ्ज : विपश्यना साधना केंद्र**, कोंडापुर (व्हाया) संगारेड्डी, जि. मेडक - ५०२३०६. संपर्क: मोबा. ९३९२०-९३७९९, ९३९८३-१६१५५.

**धम्मकेतन: विपश्यना साधना केंद्र**, पो. मम्मरा (व्हाया) कोडुकुलान्जी, चेन्नानूर, जि. अलपुज्जा. केरल-६८९५०८. फोन: (०४७४) २३५-१६१६. Email: info@ketana.dhamma.org संपर्क: १) (कार्यालय) केरल विपश्यना समिती, मायथ्री, नरेचथरा लाइन, फॉरनडोर रोड, एलमकार पो. ऑ. कोची-६८२ ०२६. केरल फोन: (०४८४) २५३९८९१ (२) श्री बी. रविंद्रन, मोबा. ९८४६५-६९८११.

**धम्म मधुरा:** मदुराई (धर्म की मधुरता) मदुराई

**धम्मकानन : धम्मकानन विपश्यना केंद्र**, वैनगंगा तट, रिंगटोला, पो. गर्रा, बालाघाट. फोन: (०७६३२) २९२४६५; संपर्क: १) श्री हरीदास मेश्राम, १२६, रतन कुटी, गंगानगर रोड, बुद्धी, बालाघाट-४८१००१, (म. प्र.) फोन: (०७६३२) २३९१६५, मोबाईल: ०९४२५१४००१५, Email: dineshbg@gmail.com २) श्री खोब्रागडे, मोबा. ०९४२४३-३६२४१.

**धम्मकेतु :** विपश्यना केंद्र, पोस्ट बॉक्स १६, थनीद, व्हाया-अंजौरा, जिला-दुर्गा, छत्तीसगढ़-४९१००१; (म.प्र.) फोन: (०७८८) ३२०५५१३, मोबा. ९५८९८४२७३७. Email: info@ketu.dhamma.org संपर्क: १) धम्मकेतु, (उपरोक्त केंद्र के पते पर) तथा मोबा. ०९४२५२-३४७५७, ०९०९८९-२०२४६.

**धम्मबल : विपश्यना साधना केंद्र**, भेडाघाट थाने से एक किलोमीटर, बापट मार्ग, भेडाघाट, जबलपुर. मोबा. ९३००५०६२५३. संपर्क: विपश्यना ट्रस्ट, जबलपुर, द्वारा - मधु मेडिकल स्टोर्स, मेडिसिन काम्प्लेक्स, शास्त्रीब्रिज के पास, मॉडल रोड, बैंक ऑफ बड़ोदा के बाजू में, जबलपुर-०२ फोन: ०७६१-४००६२५२, मोबा. ९९८१५-९८३५२, ९४२४३-५५२१४.

**धम्मलच्छवी : वैशाली विपश्यना केंद्र**, लदौरा ग्राम, लदौरा पाक्री, मुजफ्फरपुर-८४३११३. फोन: ०९९३११६१२९०.

**संपर्क:** श्री गोयन्का, जेनीथ आटो सर्विस, अघोरिया बाजार, पो. रामना, मुजफ्फरपुर, पिन-८४२००२. फोन: ०६२१-२२४०-२१५, २२४७७६०. Email: info@licchavi.dhamma.org

**धम्मबोधि: बोधगया अंतर्राष्ट्रीय विपश्यना साधना केंद्र,** मगध विश्वविद्यालय के समीप, पो. मगध विश्वविद्यालय, गया-दोबी रोड, बोधगया-८२४२३४, मोबा. ९४७१६-०३५३१, Email: info@bodhi.dhamma.org **संपर्क:** फोन: (०६३१) २२००४३७, ९९५५९-११५५६.

**धम्मपुब्बोत्तर: मिजोरम विपश्यना साधना केंद्र,** कमलानगर-२, सीएडीसी, चांगते-सी, जि. लोंगतालाई, मिजोरम -७९६७७२. Email: mvmc.knagar@gmail.com, **संपर्क:** दिगंबर चकमा, फोन: ०३७२-२५६३६८३. मोबा. ०९४३६७-६३७०८,

**धम्मपुरी: त्रिपुरा विपश्यना मेडिटेशन सेंटर,** पो. मचमरा, जि. उत्तर त्रिपुरा, पिन: ७९९२६५. मोबा. ०९८६२६-४६७६४, Email: info@Puri.dhamma.org **संपर्क:** श्री देवान मोहन, फोन: ०३८१-२३००४४१, मोबा. ०९८६२१-५४८८२, ०९४०२५-२७१९१.

**धम्मगंगा: विपश्यना केंद्र,** सोदपुर, हरिश्चन्द्र दत्ता रोड, पनिहटी, बारा मन्दिर घाट, कोलकाता-७००११४. फोन: (०३३) २५५३२८५५. Email: info@ganga.dhamma.org **संपर्क:** कार्यालय: श्री काजडिया, २२, बोनफील्ड लेन, दूसरा तल्ला, कोलकाता-७००००१, फोन: (०३३) २२४२३२५/४५६१ (२) श्री तोदी, १२३A, मोतीलाल नेहरू रोड, कोलकाता-२९ फोन नि. २४८५४१७९. मोबा. ९८३१४-४७७०१.

**धम्मवंग:** कोलकाता, पश्चिम बंगाल **संपर्क:** धम्मगंगा केंद्र.

**धम्मपाल: धम्मपाल विपश्यना केंद्र,** केरवा डैम के पीछे, ग्राम दौलतपुरा, भोपाल-४६२ ०४४, Email: dhampal@airtelmail.in; **संपर्क:** मोबा. ९८९३२-८९०४९, फोन: (०७५५) २४६८०५३, २४६२३५१, फैक्स: २४६-८१९७. ऑन लाइन आवेदन: <http://www.dhamma.org/en/schedules/schpala.shtml>

**धम्ममालवा : इंदौर (म.प्र.) विपश्यना केंद्र,** ग्राम - जंबूडी हप्सी, गोमटगिरी के आगे, पितृ पर्वत के सामने, हातोद रोड, इंदौर-४५२००३. **संपर्क:** १) इंदौर विपश्यना इंटरनेशनल फाउंडेशन, ट्रस्ट, "लाभगंगा" ५८२, एम. जी. रोड इंदौर (म.प्र.) फोन: (०७३१) ४२७३३१३. Email: info@malava.dhamma.org; dhammamalava@gmail.com २) श्री शंभुदयाल शर्मा, मोबा. ९८९३१-२९८८८.

**धम्मरत : (रतलाम से १५ कि.मी.) साई मंदीर के पीछे,** ग्राम धमनोद ता. साईलन जि. रतलाम-४५७००१, फैक्स: ०७४१२ ४०३८८२, मोबा. ०९८२७५-३५२५७. Email: dhamm.rata@gmail.com **संपर्क:** रतलाम विपश्यना समिति, द्वारा डा वाधवानी क्लीनिक, ११७, स्टेशन रोड, रतलाम-४५७००१ मोबा. ०९९८१०-८४८२२, ९४२५३-६४९५६.

**धम्मउपवन:** बाराचकिया, बिहार **संपर्क:** फोन: निवास (०६२१) २४४ ९७५; ५५२१ ०७७०

**धम्मउत्कल:** विपश्यना साधना केंद्र, ग्राम चानबेरा पो. अमसेना, (व्हाया) खरियार रोड जिला: नुआपाडा, उड़ीसा-७६६१०६, मोबा. ०९४०६२३७८९६, **संपर्क:** १) श्री. एस. एन. अग्रवाल, मोबा. ०९४३८६१०००७, २) श्री. पुरुषोत्तम जे. मोबा. ०९४३७०-७०५०५,

**धम्मसिक्किम: विपश्यना साधना केंद्र,** पो. ऑ. आहो सेन्ती, ग्राम, सेन्ती ईस्ट सिक्किम- ७३७१३५, **संपर्क:** शीलादेवी चौरसिया, मोबा. ०९८३०७-०६४८१, ०९७४८४-६१७८७, ०९४३४३-३९३०३, ०९४३४८-६२२२६. Email: basantigorsia@hotmail.com

**धर्मशृंग: नेपाल विपश्यना केंद्र,** मुहान पोखरी, बूढानीलकंठ, पो. बा. १२८९६, काठमांडू, फोन: ९७७ (०१) ४३७१६५५, ४३७१००७, ४२५०५८१, ४२२५४९०; निवास: ४२२४७२०, ४२२६३१४. Email: info@sringa.dhamma.org; **संपर्क:** फोन: २५०५८१, २२५४९०, नि.२२१२९०. फैक्स: २२४७२०, २२६३१४.

**धम्मजननी: लुंबिनी विपश्यना केंद्र,** लुंबिनी (पीस फ्लेम के पास), रुपनदेही, लुंबिनी अंचल, नेपाल. Email: info@janani.dhamma.org फोन: ९७७ (७१) ५८०२८२. **संपर्क:** नेपाल. फोन: ९७७ (७१) ५४१५४९.

**धम्मविराट : पूर्वांचल विपश्यना केंद्र,** फुलबरी टोल, बस पार्क के दक्षिण की ओर इथारी- ७ संसरी, नेपाल; फोन: [९७७] (२५) ५८५५२१; Email: info@birata.dhamma.org; **संपर्क:** १) श्री मुंदडा, फोन: [९७७] (२१) ५२५४८६, ५२७६७१. फैक्स: ५२६४६६; २) श्री गोयल, फोन: दूकान [९७७] (२५) ५२३५२८, नि. ५२६८२९.

**धम्मतराई : वीरगंज विपश्यना केंद्र,** परवानीपुर, पारसा, नेपाल. Email: info@tarai.dhamma.org **संपर्क:** १) कार्यालय: संदीप बिल्डींग, आदर्श नगर, पो. बा. नं. ३२. फोन: ०५१-५२१८८४. फैक्स: ०५१-५८०४६५. मोबा. ९८०४२-४५७६

**धम्मचितवन :** चितवन विपश्यना केंद्र, मंगलपुर व्ही.डी.सी. वार्ड नं ८, विजयनगर बाजार के समीप, चितवन, नेपाल Email: info@citavana.dhamma.org **संपर्क:** १) श्री महाराजन, फोन: ९७७(५६) ५२०२९४, ५२८२९४

**धम्मकीर्ति :** कीर्तिपुर विपश्यना केंद्र, देवधोका, कीर्तिपुर, नेपाल. **संपर्क:** श्री महर्जन, समाल तोले, वार्ड नं. ६, कीर्तिपुर.

**धम्मपोखरा : पोखर विपश्यना केंद्र,** पचभैया लेखनाथ नगरपालिका, पोखरा, कसकी, नेपाल. **संपर्क:** श्री नारा गुरुंग फोन: [९७७] (०६१) ६९१९७२, मोबा. ९८४६२-३२३८३, ९८४१२-५५६८८. Email: info@pokhara.dhamma.org

## Cambodia

**Dhamma Latthikā, Battambang Vipassana Centre, Truṅgmorn Mountain, National Route 10, District Phnom Sampeau, Battambang, Cambodia Contact:** Phnom-Penh office: Mrs. Nary POC, Street 350, #35, Beng Keng Kang, Kneap III, Khan Chamkar Morn, Phnom-Penh, Cambodia. P.O. Box 1014 Phnom-Penh, Cambodia Tel. [855] (012) 689 732; poc\_nary@hotmail.com; **Local Contact:** Off: Tel: [855] (536) 488 588, 2. Mr. Sochet Kuoch, Tel: [855] (092) 931 647, [855] (012) 995 269 Email: miantan2000@yahoo.co.uk and ms\_apsara@yahoo.com

## **Hong Kong**

**Dhamma Muttā**, G.P.O. Box 5185, Hong Kong Tel: 852-2671 7031; Fax: 852-8147 3312 Email: info@hk.dhamma.org

## **Indonesia**

**Dhamma Jāvā**, Jl. H. Achmad No.99; Kampung Bojong, Gunung Geulis, Kecamatan Sukaraja, Cisarua-Bogor, Indonesia. Tel: [62] (0251) 827-1008; Fax: [62] (021) 581-6663; Website: www.java.dhamma.org **Course Registration Office Address:** IVMF ( Indonesia Vipassana Meditation Foundation ), Jl. Tanjung Duren Barat I, No. 27 A, Lt. 4, Jakarta Barat, Indonesia Tel : [62] ( 021 ) 7066 3290 (7am to 10pm); Fax: [62] ( 021 ) 4585 7618 Email: info@java.dhamma.org

## **Iran**

**Dhamma Īran**, Teheran Dhamma House Tehran Mehrshahr, Eram Bolvar, 219 Road, No. 158 Tel: 98-261-34026 97; website: www.iran.dhamma.org Email: info@iran.dhamma.org

## **Israel**

**Dhamma Pamoda**, Kibbutz Deganya-B, Jordan Valley, Israel **City Contact:** Israel Vipassana Trust, P.O. Box 75, Ramat-Gan 52100, Israel Website: www.il.dhamma.org/os/Vipassana-centre-eng.asp Email: info@il.dhamma.org

**Dhamma Korea**, Choongbook, Korea. Dabo Temple, 17-1, samsong-ri, cheongcheon-myun, gwaesan-koon, choongbook, Korea. Tel: +82-010-8912-3566, +82-010-3044-8396 Website: www.kr.dhamma.org Email: dhammakor@gmail.com

## **Japan**

**Dhamma Bhānu**, **Japan Vipassana Meditation Centre**, Iwakamiyoku, Hatta, Mizucho-cho, Funai-gun, Kyoto 622 0324 Tel/Fax: [81] (0771) 86 0765, Email: info@bhanu.dhamma.org

**Dhammādicca**, 782-1 Kaminogo, Mutsuzawa-machi, Chosei-gun, Chiba, Japan 299 4413. Tel: [81] (475) 403 611. Website: www.adicca.dhamma.org

## **Malaysia**

**Dhamma Malaya**, **Malaysia Vipassana Centre**, **Centre Address:** Gambang Plantation, opp. Univ. M.P. Lebuhraya MEC, Gambang, Pahang, Malaysia **Office Address:** No., 30B, Jalan SM12, Taman Sri Manja, 46000 Petaling Jaya, Malaysia. Tel: [60] (16) 341 4776 (English Enquiry) Tel: [60] (12) 339 0089 (Mandarin Enquiry) Fax: [60] (3) 7785 1218; Website: www.malaya.dhamma.org Email: info@malaya.dhamma.org

## **Mongolia**

**Dhamma Mahāna**, **Vipassana center trust of Mongolia**. Eronkhy said Amaryn Gudamj, Soyolyn Tov Orgoo, 9th floor, Suite 909, Mongolia Tel: [976] 9191 5892, 9909 9374; **Contact:** Central Post Office, P. O. Box 2146 Ulaanbaatar 211213, Mongolia Email: info@mahana.dhamma.org

## **Myanmar**

**Dhamma Joti**, **Vipassana Centre**, Wingaba Yele Kyaung, Nga Htat Gyi Pagoda Road, Bahan, Yangon, Myanmar Tel: [95] (1) 549 290, 546660; Office: No. 77, Shwe Bon Tha Street, Yangon, Myanmar. Fax: [95] (1) 248 174 **Contact:** Mr. Banwari Goenka, Goenka Geha, 77 Shwe Bon Tha Street, Yangon, Myanmar Tel: [95] (1) 241 708, 253 601, 245 327, 245 201; Res. [95] (1) 556 920, 555 078, 554 459; Tel/Fax: Res. [95] (01) 556 920; Off. 248 174; Mobile: 95950-13929; Email: bandoola@mptmail.net.mm; goenka@mptmail.net.mm Email: dhammajoti@mptmail.net.mm

**Dhamma Ratana**, Oak Pho Monastery, Myoma Quarter, Mogok, Myanmar **Contact:** Dr. Myo Aung, Shansu Quarter, Mogok. Mobile: [95] (09) 6970 840, 9031 861;

**Dhamma Maṇḍapa**, Bhamo Monastery, Bawdigone, Near Mandalay Arts &

Science University, 39th Street, Mahar Aung Mye Tsp., Mandalay, Myanmar Tel: [95] (02) 39694 Email: info@mandala.dhamma.org

**Dhamma Maṇḍala**, Yetagun Taung, Mandalay, Myanmar, Tel: [95] (02) 57655  
**Contact:** Dr Mya Maung, House No 33, 25th Street, (Between 81 and 82nd Street), Mandalay, Myanmar Tel: [95] (02) 57655, Email: info@mandala.dhamma.org

**Dhamma Makuṭa**, Mindadar Quarter, Mogok.Mandalay Division, Myanmar. Tel: [95] (09) 80-31861. Email: info@joti.dhamma.org

**Dhamma Manorama**, Main road to Maubin University, Maubin, Myanmar. Tel: **Contact:** U Hla Myint Tin, Headmaster, State High School, Maubin, Myanmar. Tel: [95] (045) 30470

**Dhamma Mahimā**, Yechan Oo Village, Mandalay-Lashio Road, Pyin Oo Lwin, Mandalay Division, Myanmar. Tel: [95] (085) 21501. Email: info@mandala.dhamma.org

**Dhamma Manohara**, Aung Tha Ya Qr, Thanbyu-Za Yet, Mon State **Contact:** Daw Khin Kyu Kyu Khine, No.64 Aungsan Road, Set-Thit Qr, Thanbyu-Zayet, Mon State, Myanmar. Tel: [95] (057) 25607

**Dhamma Nidhi**, Plot No. N71-72, Off Yangon-Pyay Road, Pyinma Ngu Sakyat Kwin, In Dagaw Village, Bago District, Myanmar. **Contact:** Moe Mya Mya (Micky), 262-264, Pyay Road, Dagon Centre, Block A, 3rd Floor, Sanchaung Township, Yangon11111, Myanmar. Tel: 95-1-503873, 503516~9, Email: dagon@mptmail.net.mm

**Dhamma Nāṇadhaja**, Shwe Taung Oo Hill, Yin Ma Bin Township, Monywa District, Sagaing Division, Myanmar **Contact:** Dhamma Joti Vipassana Centre

**Dhamma Lābha**, Lasho, Myanmar

**Dhamma Magga**, Near Yangon, Off Yangon Pegu Highway, Myanmar

**Dhamma Mahāpabbata**, Taunggyi, Shan State, Myanmar

**Dhamma Cetiya Paṭṭhāra**, Kaytho, Myanmar

**Dhamma Myuradipa**, Irrawadi Division, Myanmar

**Dhamma Pabbata**, Muse, Myanmar

**Dhamma Hita Sukha Geha**, Insein Central Jail, Yangon, Myanmar

**Dhamma Hita Sukha Geha-2**, Central Jail Tharawaddy, Myanmar

**Dhamma Rakkhita**, Thayawaddi Prison, Bago, Myanmar

**Dhamma Vimutti**, Mandalay, Myanmar

## **Philippines**

**Dhamma Phala**, Philippines Email: info@ph.dhamma.org

## **Sri Lanka**

**Dhamma Kūṭa, Vipassana Meditation Centre**, Mowbray, Hindagala, Peradeniya, Sri Lanka Tel/Fax: [94] (081) 238 5774; Tel: [94] (060) 280 0057; Website: www.lanka.com/dhamma/dhammakuta Email: dhamma@sltnet.lk

**Dhamma Sobhā, Vipassana Meditation Centre** Balika Vidyalaya Road, Pahala Kosgama, Kosgama, Sri Lanka Tel: [94] (36) 225-3955 Email: dhammasobhavmc@gmail.com

**Dhamma Anurādha**, Ichchankulama Wewa Road, Kalattewa, Kurundankulama, Anuradhapura, Sri Lanka. Tel: [94] (25) 222-6959; **Contact:** Mr. D.H. Henry, Opposite School, Wannithammannawa, Anuradhapura, Sri Lanka. Tel: [94] (25) 222-1887; Mobile. [94] (71) 418-2094. Website: www.anuradha.dhamma.org Email: info@anuradha.dhamma.org

## **Taiwan**

**Dhammodaya**, No. 35, Lane 280, C hung-Ho Street, Section 2, Ta-Nan, Hsin She, Taichung 426, P. O Box No. 21, Taiwan Tel: [886] (4) 581 4265, 582 3932; Website: www.udaya.dhamma.org Email: dhammodaya@gmail.com

**Dhamma Vikāsa, Taiwan Vipassana Centre** - Dhamma Vikasa No. 1-1, Lane 100, Dingnong Road Laonong Village Liouguei Township Kaohsiung County

Taiwan Republic of China Tel: [886] 7-688 1878 Fax: [886] 7-688 1879 Email: info@vikasa.dhamma.org

### **Thailand,**

**Dhamma Kamala, Thailand Vipassana Centre,** 200 Yoo Pha Suk Road, Ban Nuen Pha Suk, Tambon Dong Khi Lek, Muang District, Prachinburi Province, 25000, Thailand Tel. [66] (037) 403- 514-6, [66] (037) 403 185; Website: <http://www.kamala.dhamma.org/> Email: info@kamala.dhamma.org

**Dhamma Ābhā,** 138 Ban Huay Plu, Tambon Kaengsobha, Wangton District, Pitsanulok Province, 65220, Thailand Tel : [66] (81) 605-5576, [66] (86) 928-6077; Fax : [66] (55) 268 049; Website: <http://www.abha.dhamma.org/> Email: info@abha.dhamma.org

**Dhamma Suvanna,** 112 Moo 1, Tambon Kong, Nongrua District, Khonkaen Province, 40240, Thailand Tel [66] (08) 9186-4499, [66] (08) 6233-4256; Fax [66] (043) 242-288; Website: <http://www.suvanna.dhamma.org/> Email: info@suvanna.dhamma.org

**Dhamma Kañcana,** Mooban Wang Kayai, Tambon Prangpley, Sangklaburi District, Kanchanaburi Province, Thailand Tel. [66] (08) 5046-3111 Fax [66](02) 993-2700 Email: info@kancana.dhamma.org

**Dhamma Dhāni,** 42/660 KC Garden Home Housing Estate, Nimit Mai Road, East Samwa Sub-district, Klongsamwa District, Bangkok 10510, Thailand Tel. [66] (02) 993-2711 Fax [66] (02) 993-2700 Email: info@dhani.dhamma.org

**Dhamma Simanta,** Chiangmai, Thailand **Contact:** Mr. Vitcha Klinpratoom, 67/86, Paholyotin 69, Anusaowaree, Bangkokhen, BKK 10220 Thailand Tel: [66] (81) 645 7896; Fax: [66] (2) 279 2968; Email: vitchcha@yahoo.com Email: info@simanta.dhamma.org

**Dhamma Porāṇo:** A meditator has donated six acres of land near Nakorn Sri Dhammaraj (the name of the city), an important and ancient sea-port.

**Dhamma Puneti,** Udorn Province, Thailand

**Dhamma Canda Pabhā,** Chantaburi, an eastern town about 245 kilometres from Bangkok

### **Australia & New Zealand,**

**Dhamma Bhūmi, Vipassana Centre,** P. O. Box 103, Blackheath, NSW 2785, Australia Tel: [61] (02) 4787 7436; Fax: [61] (02) 4787 7221 Website: [www.bhumi.dhamma.org](http://www.bhumi.dhamma.org) Email: info@bhumi.dhamma.org

**Dhamma Rasmi, Vipassana Centre Queensland,** P. O. Box 119, Rules Road, Pomona, Qld 4568, Australia Tel: [61] (07) 5485 2452; Fax: [61] (07) 5485 2907 Website: [www.rasmi.dhamma.org](http://www.rasmi.dhamma.org) Email: info@rasmi.dhamma.org

**Dhamma Pabhā, Vipassana Centre Tasmania,** GPO Box 6, Hobart, Tasmania 7001, Australia Tel: [61] (03) 6263 6785; Website: [www.pabha.dhamma.org](http://www.pabha.dhamma.org) Course registration & information: [61] (03) 6228-6535 or (03) 6266-4343 Email: info@pabha.dhamma.org

**Dhamma Āloka,** P. O. Box 11, Woori Yallock, VIC 3139, Australia Tel: [61] (03) 5961 5722; Fax: [61] (03) 5961 5765 Website: [www.aloka.dhamma.org](http://www.aloka.dhamma.org) Email: info@aloka.dhamma.org

**Dhamma Ujjala,** Mail to: PO Box 10292, BC Gouger Street, Adelaide SA 5000, [Lot 52, Emu Flat Road, Clare SA 5453, Australia] **Tel Contact:** Anne Blizzard [61] (0)8 8278 8278; Email: info@ujjala.dhamma.org

**Dhamma Padipa,** Vipassana Foundation of WA, Australia, Website: [www.dhamma.org.au](http://www.dhamma.org.au) **Contact:** Andrew Parry C/- 13 Goldsmith Road, Claremont, WA 6010, Australia. Tel: [61]-(8)-9388 9151. Email: andparry@optusnet.com.au Email: info@padipa.dhamma.org

**Dhamma Medini,** 153 Burnside Road, RD3 Kaukapakapa, Rodney District, New Zealand Tel: [64] (09) 420 5319; Fax: [64] (09) 420 5320; Website: [www.medini.dhamma.org](http://www.medini.dhamma.org) Email: info@medini.dhamma.org

**Dhamma Passaddhi**, Northern Rivers region, New South Wales Email: info@passaddhi.dhamma.org

## **Europe,**

**Dhamma Dīpa**, Harewood End, Herefordshire, HR2 8JS, UK Tel: [44] (01989) 730 234; male AT bungalow: [44] (01989) 730 204; female AT bungalow: [44] (01989) 731 024; Fax: [44] (01989) 730 450; Website: www.dipa.dhamma.org Email: info@dipa.dhamma.org

**Dhamma Padhāna, European Long-Course Centre**, Harewood End, Herefordshire, HR2 8JS, UK Website: www.eu.region.dhamma.org/os username <oldstudent> password <behappy> Email: info@padhana.dhamma.org

**Dhamma Dvāra**, Vipassana Zentrum, Alte Strasse 6, 08606 Triebel, Germany Tel: [49] (37434) 79770; Website: www.dvara.dhamma.org Email: info@dvara.dhamma.org

**Dhamma Mahī, France Vipassana Centre**, Le Bois Planté, Louesme, F-89350 Champignelles, France. Tel: [33] (0386) 457 514; Fax [33] (0386) 457 620; Website: www.mahi.dhamma.org Email: info@mahi.dhamma.org

**Dhamma Nilaya**, 6, Chemin de la Moinerie, 77120, Saints, France Tel/Fax: [33] 1 6475 1370; Mobile: 0609899079 Email: vcjuly2001@orange.fr

**Dhamma Aṭala, Vipassana Centre**, SP29, Lutirano 15 50034 Lutirano (Fi) Italy Tel: Off. [39] (055) 804 818; Website: www.atala.dhamma.org Email: info@atala.dhamma.org

**Dhamma Sumeru**, Centre Vipassana, No. 140, Ch-2610 Mont-Soleil, Switzerland Tel: [41] (32) 941 1670; Website: www.sumeru.dhamma.org Email: info@sumeru.dhamma.org Registration office: registration@sumeru.dhamma.org

**Dhamma Neru, Centro de Meditación Vipassana**, Cami Cam Ram, Els Bruguers, A.C.29, Santa Maria de Palautordera, 08460 Barcelona, Spain Tel: [34] (93) 848 2695; Website: www.neru.dhamma.org Email: info@neru.dhamma.org

**Dhamma Pajjota**, Dhamma Pajjota, Belgium, Light (or Torch) of Dhamma, Vipassana Centrum, Driepaal 3, 3650 Dilsen-Stokkem, Belgium. Tel: [32] (0) 89 518 230; Website: www.pajjota.dhamma.org Email: info@pajjota.dhamma.org

**Dhamma Sobhana**, Lyckebygården, S-599 93 Ödeshög, Sweden. Tel: [46] (143) 211 36; Website: www.sobhana.dhamma.org Email: info@sobhana.dhamma.org

**Dhamma Pallava**, Vipassana Poland **Contact:** Malgorzata Myc 02-798 Warszawa, Ekologiczna 8 m.79 Poland Tel: [48](22) 408 22 48 Mobile: [48] 505-830-915 Email: info@pl.dhamma.org

**Dhamma Sukhakari**, East Anglia (UK)

## **North America**

**Dhamma Dharā**, VMC, 386 Colrain-Shelburne Road, Shelburne MA 01370-9672, USA Tel: [1] (413) 625 2160; Fax: [1] (413) 625 2170; Website: www.dhara.dhamma.org Email: info@dhara.dhamma.org

**Dhamma Kuñja, Northwest Vipassana Center**, 445 Gore Road, Onalaska, WA 98570, USA Tel/Fax: [1] (360) 978 5434, Reg Fax: [1] (360) 242-5988; Website: www.kunja.dhamma.org Email: info@kunja.dhamma.org

**Dhamma Mahāvāna, California Vipassana Center** 58503 Road 225, North Fork, California, 93643 Mailing address: P. O. Box 1167, North Fork, CA 93643, USA Tel: [1] (559) 877 4386; Fax [1] (559) 877 4387; Website: www.mahavana.dhamma.org Email: info@mahavana.dhamma.org

**Dhamma Sirī, Southwest Vipassana Center**, 10850 County Road 155 A Kaufman, TX 75142, USA Mailing address: P. O. Box 7659, Dallas, TX 75209, USA Tel: [1] (972) 962-8858; Fax: [1] (972) 346-8020 (registration); [1] (972) 932-7868 (center); Website: www.siri.dhamma.org Email: info@siri.dhamma.org

**Dhamma Surabhi, Vipassana Meditation Center**, P. O. Box 699, Merritt, BC V1K 1B8, Canada Tel: [1] (250) 378 4506; Website: www.surabhi.dhamma.org Email: info@surabhi.dhamma.org

**Dhamma Maṇḍa, Northern California Vipassana Center**, Mailing address: P. O. Box 265, Cobb, Ca 95426, USA Physical address: 10343 Highway 175, Kelseyville, CA 95451, USA Tel: [1] (707) 928-9981; Website: www.manda.dhamma.org Email: info@manda.dhamma.org

**Dhamma Suttama, Vipassana Meditation Centre 810**, Côte Azélie, Notre-Dame-de-Bonsecours, Montebello, (Québec), J0V 1L0, Canada Tél. 1-819-423-1411, Fax. 1- 819- 423- 1312 Website: www.suttama.dhamma.org Email: info@suttama.dhamma.org

**Dhamma Pakāsa, Illinois Vipassana Meditation Center**, 10076 Fish Hatchery Road, Pecatonica, IL 61063, USA Tel: [1] (815) 489-0420; Fax [1] (360) 283-7068 Website: www.pakasa.dhamma.org Email: info@pakasa.dhamma.org

**Dhamma Torana, Ontario Vipassana Centre**, 6486 Simcoe County Road 56, Egbert, Ontario, L0L 1N0 Canada Tel: [1] (705) 434 9850; Website: www.torana.dhamma.org Email: info@torana.dhamma.org

**Dhamma Vaddhana, Southern California Vipassana Center**, P.O. Box 486, Joshua Tree, CA 92252, USA. Tel: [1] (760) 362-4615;; Website: www.vaddhana.dhamma.org Email: info@vaddhana.dhamma.org

**Dhamma Patāpa, Southeast Vipassana Trust**, Jessup, Georgia, South East USA Website: www.patapa.dhamma.org

**Dhamma Modana**, Canada Tel: [1] (250) 483-7522; Website: www.modana.dhamma.org Email: info@modana.dhamma.org

**Dhamma Karunā**, Alberta Vipassana Foundation Tel: [1](403) 283-1889 Fax: [1](403) 206-7453 Email: registration@ab.ca.dhamma.org

### **Latin America**

**Dhamma Santi, Centro de Meditação Vipassana**, Miguel Pereira, Brazil Tel: [55] (24) 2468 1188. Website: www.santi.dhamma.org Email: info@santi.dhamma.org

**Dhamma Makaranda, Centro de Meditación Vipassana**, Valle de Bravo, Mexico Tel: [52] (726) 1-032017 Registration and information: Vipassana Mexico, P. O. Box 202, 62520 Tepoztlan, Morelos Tel/Fax: [52] (739) 395-2677; Website: www.makaranda.dhamma.org Email: info@makaranda.dhamma.org

**Dhamma Pasanna**, Melipilla, Chile Email: info@pasanna.dhamma.org

**Dhamma Sukhadā**, Buenos Aires, Argentina, **Contact:** Vipassana Argentina, Tel: [54] (11) 6385-0261; Email: info@ar.dhamma.org

**Dhamma Venūvana, Centro de Meditación Vipassana**, 90 minutes from Caracas, Sector Los Naranjos de Tasajera, Cerca de La Victoria, Estado Aragua, Venezuela. (See map on the website) Tel: [58] (212) 414-5678 For information and registration: Calle La Iglesia con Av. Francisco Solano, Torre Centro Solano Plaza, Of. 7D, Sabana Grande, Caracas, Venezuela. Phone: [58](212) 716-5988, Fax: 762-7235 Website: www.venuvana.dhamma.org Email: info@venuvana.dhamma.org

**Dhamma Suriya, Centro de Meditación Vipassana**, Cieneguilla, Lima, Perú Email: info@suriya.dhamma.org

### **South Africa**

**Dhamma Patākā**, (Rustig) Brandwacht, Worcester, 6850, P. O. Box 1771, Worcester 6849, South Africa Tel: [27] (23) 347 5446; **Contact:** Ms. Shanti Mather, Tel/Fax: [27] (028) 423 3449; Website: www.pataka.dhamma.org Email: info@pataka.dhamma.org

### **Russia**

**Dhamma Dullabha:** Avsyunino Village, Dhamma Dullabha (formerly camp "Druzba") 142 645 Russian Federation, Phones +7-968-894-23-92, +7-901-543-16-27





आचार्य श्री सत्यनारायणजी गोयन्का एवं श्रीमती इलायचीदेवी गोयन्का

श्री सत्यनारायणजी गोयन्का का जन्म म्यंमा (बर्मा) के मांडले शहर में १९२४ में हुआ। १०वीं कक्षा में सारे बर्मा में सर्वप्रथम आने पर भी पारिवारिक कारणों से आगे की पढ़ाई न कर सके। उन्होंने कम उम्र में ही अनेक वाणिज्यिक और औद्योगिक संस्थानों की स्थापना की और खूब धन अर्जित किया। अनेक सामाजिक तथा सांस्कृतिक केंद्रों की स्थापना की। तनावों के कारण शिरोरोग (Migraine) के शिकार हुए, जिसका उपचार बर्मा के ही नहीं, बल्कि विश्व के प्रसिद्ध डॉक्टर भी न कर सके। तब किसी ने उन्हें 'विपश्यना' की ओर मोड़ा, जो आज उनके तथा अनेकों के कल्याण का कारण बन गयी है।

सयाजी ऊ बा खिन से श्री गोयन्काजी ने १९५५ में विपश्यना विद्या सीखी और चौदह वर्षों तक उनके चरणों में बैठ कर अभ्यास करने के साथ बुद्धवाणी का भी अध्ययन किया। १९६९ में वे भारत आये और मुंबई में पहला शिविर लगा। तत्पश्चात् शिविरों का तांता लग गया। १९७६ में इगतपुरी में पहला निवासीय विपश्यना केंद्र बना और अब तक विश्वभर में लगभग १६७ केंद्र बन गये हैं तथा नित नये बनते जा रहे हैं, जहां प्रशिक्षित किये हुए लगभग १२०० विपश्यनाचार्यों के माध्यम से विश्व की ५९ भाषाओं में १०-दिवसीय शिविरों के अतिरिक्त, कई केंद्रों पर २०, ३०, ४५, ६० दिन के शिविर लगते हैं। सब का संचालन निःशुल्क होता है। भोजन, निवासादि का खर्च शिविर से लाभान्वित साधकों के स्वैच्छिक अनुदान से चलता है। इसके सर्वहितकारी स्वरूप को देख कर विश्व की अनेक जेलों और स्कूलों में ही नहीं, पुलिसकर्मियों, जजों, सरकारी अधिकारियों आदि के लिए भी शिविर लगाये जाते हैं।

ISBN : 978-81-7414-217-7



VRI - H39